• वर्ष ६१ • अंक १२ • मूल्य ₹१५ ।। ओ३म् ।। • जून (द्वितीय) २०१९

पाक्षिक

परोपकारी

यज्ञशाला- ऋषि उद्यान

पुण्य-पयः पीयूषपूर्ण प्रिय वेदामृत रसपान करे।
दुष्टों का दलन करे सुधि सज्जन संतों का सम्मान करे।।
गुणगान करे ऋषि मुनियों का वैदिक विज्ञान वितान करे।
सन्मार्ग दिखाये अज्ञों को प्राज्ञों को और महान् करे।।
दुर्बुद्धि के बन्धन काटे प्रज्ञा-मेधा सन्धान करे।
कलुषित मन को विलसित कर दे सब हृदयों में सद्ज्ञान भरे।।
शोधे जलवायू अंतरिक्ष संस्कारित सकल जहान करे।
दे हव्य महाभूतों के हित हुतभोग सदा यजमान करे।।
हे ज्ञानप्रदे! अविचल.सुखदे! ऋग्यजुस्साम.विद्या वरदे!
हे वैतरणी! विद्वज्जननी!! गुणगान करें गुणगान करें।।

'प्रभाकर'

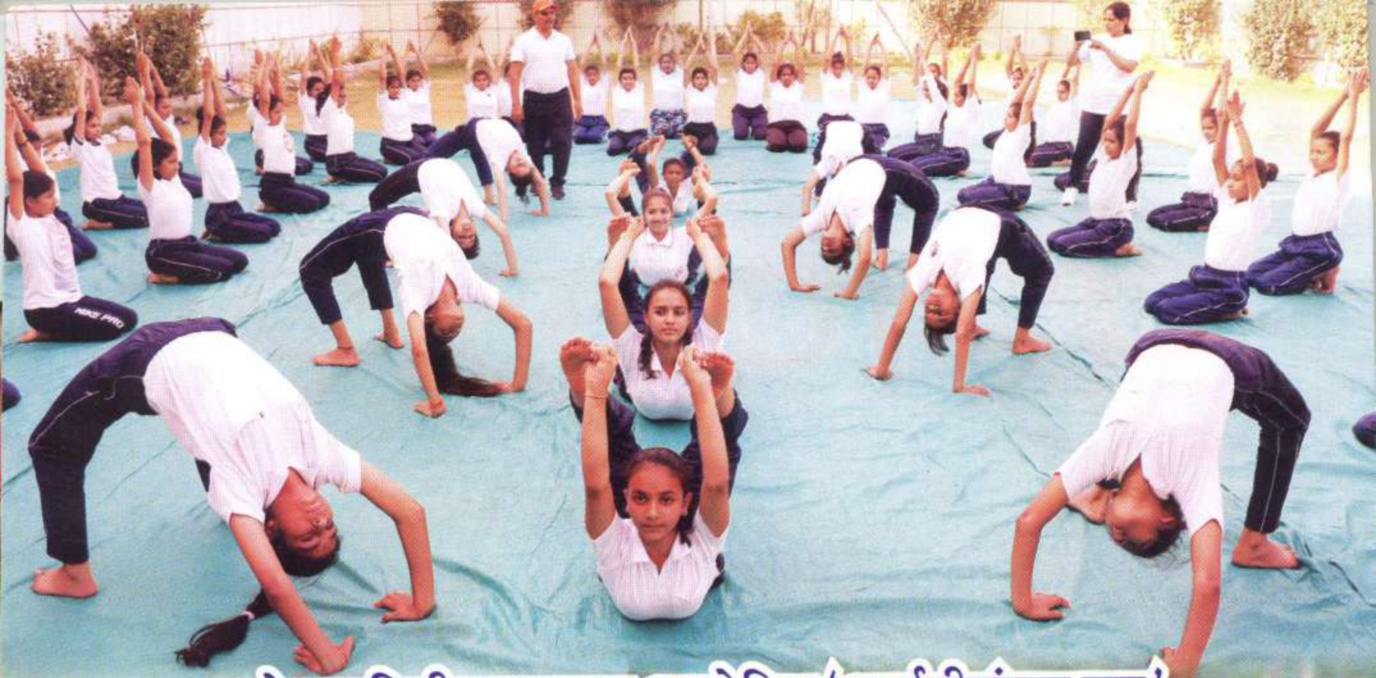

परोपकारिणी सभा द्वारा आयोजित 'आर्यवीरांगना दल'
शिविर सम्पन्न (२२ से २९ जून २०१९)

महर्षि दयानन्द सरस्वती की
उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा
का मुख पत्र

ओ३म्

विद्याविलासमनसो धृतशीलशिक्षाः,
सत्यव्रता रहितमानमलापहाराः।
संसारदु:खदलनेन सुभूषिता ये,
धन्या नरा विहितकर्म परोपकाराः।।

वर्ष : ६१ अंक : १२
दयानन्दाब्द: १९५
विक्रम संवत्: ज्येष्ठ शुक्ल २०७६
कलि संवत्: ५१२०
सृष्टि संवत्: १,९६,०८,५३,१२०

सम्पादक
डॉ. सुरेन्द्र कुमार

प्रकाशक- परोपकारिणी सभा,
केसरगंज, अजमेर- ३०५००१
दूरभाष: ०१४५-२४६०१६४

मुद्रक-मन्त्री, परोपकारिणी सभा
वैदिक यन्त्रालय, अजमेर।
दूरभाष : ०१४५-२४६०८३१

परोपकारी का शुल्क
भारत में
एक वर्ष-३०० रु.
पाँच वर्ष-१२०० रु.
आजीवन -३००० रु.
एक प्रति - १५/- रु.
विदेश में
वार्षिक-५० यू.के. पाउण्ड/८० यू.एस.डॉलर
द्विवार्षिक-९५ पाउण्ड/१५२ डॉलर
त्रिवार्षिक-१४० पाउण्ड/२२५ डॉलर
आजीवन (१५वर्ष)-५००पा./८०० डॉ.
एक प्रति - ३ पाउण्ड
एक प्रति - ४ डॉलर

वैदिक पुस्तकालय : ०१४५-२४६०१२०
ऋषि उद्यान : ०१४५-२६२१२७०

RNI. No. ३९५९ / ५९

परोपकारी

जून द्वितीय २०१९

अनुक्रम

०१. श्री मोदी की चुनावी जीत में...	सम्पादकीय	०४
०२. मृत्यु सूक्त-३१	डॉ. धर्मवीर	०७
०३. कुछ तड़प-कुछ झड़प	प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'	१०
०४. ईश्वर से कैसे मिलें?	स्वामी सर्वदानन्द	१३
०५. युग प्रवर्तक महर्षि दयानन्द...	उम्मेद सिंह विशारद	२२
०६. राजपूताने का शेर - महाराणा प्रताप	कन्हैयालाल आर्य	२४
०७. शङ्का समाधान- ५०	डॉ. वेदपाल	२९
०८. संस्था की ओर से...		३०
०९. आर्यजगत् के समाचार		३४

www.paropkarinisabha.com
email : psabhaa@gmail.com

उपनिषद्, दर्शन, प्रवचन आदि सुनने हेतु बटन दबाएं
www.paropkarinisabha.com→gallery→videos

'परोपकारी' पत्रिका में प्रकाशित सभी आलेखों में व्यक्त विचार लेखकों के निजी हैं। इन्हें सम्पादकीय नीति नहीं समझा जाये।
किसी भी विवाद की परिस्थिति में न्यायक्षेत्र अजमेर ही होगा।

श्री मोदी की चुनावी जीत में सामाजिक परिवर्तन के संकेत

सन् २०१९ के लोकसभा चुनाव सम्पन्न हो गये हैं। परिणाम भी आ गये हैं। इतिहास में पहली बार भारतीय जनता पार्टी को ३०३ सीटों पर और सहयोगी दलों (एन.डी.ए.) को मिलाकर ३५३ सीटों पर भारी विजय मिली है। जनता कह रही है- ''मोदी की विजय है, मोदी जीते हैं।'' नेता भी यही भाषा बोल रहे हैं, मीडिया भी। इसका कारण है कि बीस-बाईस दलों वाले विपक्ष के पास कोई सामाजिक मुद्दा नहीं रहा। सबके पास एक ही मुद्दा दिखाई पड़ा- 'मोदी'। सबकी धारणा बनती चली गई कि जो मोदी को जितने कटु या अपशब्द कहेगा उस पर जनता उतने ही वोट बरसा देगी। वोट तो बरसे किन्तु वे उल्टे मोदी पर ही बरसे और उनकी अप्रत्याशित विजय हुई और विपक्ष की अप्रत्याशित हार। प्रधानमन्त्री मोदी ने इस जीत को इन शब्दों में व्यक्त किया है- ''राजनीतिक पंडितों के 'गणित' की हार हुई है और जनता की 'कैमिस्ट्री' की विजय हुई है।'' इस वाक्य में उन्होंने उन सामाजिक बिन्दुओं की ओर संकेत किया है जिनके माध्यम से उन्होंने प्रचार-अभियान में जनता को अपने साथ जोड़ा।''

पर्याप्त बहुमत से विजय तो पहले श्री नेहरू, इन्दिरा गाँधी और राजीव गाँधी के कार्यकाल में भी हुई है, किन्तु वह या तो राजनीतिक विजय थी अथवा शोक-संवेदना की। प्रधानमन्त्री मोदी की विजय इस अर्थ में उनसे भिन्न है कि यह राजनीतिक के साथ एक सामाजिक विजय भी है। यह भावुकता से प्रेरित विजय नहीं है अपितु विवेक से प्रेरित विजय है। इस चुनाव में भाजपा ने राष्ट्रहित और सामाजिक विरासत से जुड़े वे मुद्दे भी जनता के सामने रखे, जिनकी पिछली सरकारों द्वारा घोर उपेक्षा के कारण राष्ट्रहितैषी जनता मन मसोस कर रह जाती थी। स्वतन्त्रता-आन्दोलन के समय और उसके उपरान्त आज तक भारत की राजनीति में तीन शब्दों का प्रचलन बहुत रहा है- धर्मनिरपेक्षता, लोकतन्त्र और समाजवाद। अपने मूलार्थ और मूल उद्देश्य में ये शब्द बहुत अच्छे हो सकते हैं किन्तु राजनीति के क्रियात्मक व्यवहार में ये शब्द पटरी से उतर चुके हैं। विश्लेषकों की राय में भारत में धर्मनिरपेक्षता एक पाखण्ड बन चुका है, लोकतन्त्र एक दिखावा तथा समाजवाद एक छलावा बन चुका है। जो कहो उसको करो मत, जो करो उसको कहो मत, अर्थात् जिसकी कथनी-करनी में जितना अधिक अन्तर होता है वह स्वयं को उतना ही बड़ा राजनेता मान लेता है। इनसे जनता बहकी भी है, भटकी भी है। इन शब्दों के तिलिस्म में पनपे हैं-वंशवाद, परिवारवाद, जातिवाद, क्षेत्रवाद और क्षीण हुए हैं राष्ट्रवाद और सांस्कृतिक विरासत।

क्रान्तिकारी समाज-सुधारक महर्षि दयानन्द और उनके अनुयायी आर्यसमाज ने जातिवाद को समाज और देश के लिए हानिकारक बताया था। इसी कारण उसको निर्मूल करने का आह्वान भी किया और क्रियात्मक रूप में बहुत कष्ट उठाते हुए भी उसको क्षीण करने का प्रयास किया। संविधान ने भी उसको गैरकानूनी माना है। प्रारम्भ में यह अभियान कुछ सफल भी रहा किन्तु राजनीतिक दलों ने इस अभियान को अपने सत्ता-स्वार्थ के लिए व्यर्थ कर दिया। जातिवाद ने भारत के समाज में अस्पृश्यता, ऊँच-नीच, अन्याय, अत्याचार का व्यवहार कर समाज को विघटित और घृणापरक बनाया है। इस इतिहास को जानते हुए भी राजनीतिक लोगों ने संविधान की नाक के नीचे बैठकर अपने स्वार्थ के लिए उसको बढ़ावा दिया, उसे रोका नहीं। जाति का पोषण करने वाली अनेक पार्टियाँ भारत में स्थापित हुईं और उसके बल पर सत्ता भी प्राप्त करती रहीं। इन पार्टियों के व्यामोह में बहक कर जातियाँ फिर से संगठित और सुदृढ़ हो गईं और भारत में फिर जातिवादी वातावरण पोषित हो गया। निहित जातिहितवादी दलों ने अपने प्रति भरपूर समर्थन देखकर स्वयं को उन जातियों का ठेकेदार भी मान लिया। वर्तमान चुनाव में जनता ने उस जातिवादी व्यामोह से निकलने का मन बनाया और अधिकांश लोगों ने जातिवाद से ऊपर उठकर प्रधानमन्त्री मोदी को वोट दिया है। इस चुनाव ने जातिवादी सोच को क्षीण किया है और जातियों के ठेकेदारों की ठेकेदारी को

समाप्त करने की ओर कदम बढ़ाया है। यह इस चुनाव की महत्त्वपूर्ण सामाजिक उपलब्धि है। यदि मोदी इस सोच को भविष्य में इसी प्रकार आगे बढ़ायेंगे तो जातिवाद क्षीण होता जायेगा और श्री मोदी राजनेता के साथ-साथ एक समाजसुधारक के रूप में श्रेय प्राप्त करेंगे।

प्रधानमन्त्री मोदी के नेतृत्व में सम्पन्न इस चुनाव का एक शुभ संकेत यह है कि इसने लोकतन्त्र की आड़ में दिनों-दिन पनपते वंशवाद और परिवारवाद को महत्त्वहीन सिद्ध कर दिया है। देश और राज्यों में कुछ परिवार राजतन्त्र के समान जड़ें जमाने लगे थे और जनता में वे यह प्रभाव विकसित करने में लगे थे कि वही देश को भलीभाँति चला सकते हैं, उन्हीं को शासन करना आता है और वही इसके पैतृक अधिकारी हैं। जनता ने उनकी इस राजतान्त्रिक सोच को झटका देकर लोकतान्त्रिक प्रणाली की रक्षा की है। इतिहास हमें यह जानकारी देता है कि लोकतन्त्र में वंशवाद-परिवारवाद का सर्वप्रथम बीज-वपन करने वाले महात्मा गाँधी थे और दल के रूप में काँग्रेस थी। सन् १९४६ में प्रधानमन्त्री के चयन के लिए जब काँग्रेस में मत-प्राप्ति की प्रक्रिया प्रारम्भ हुई तो काँग्रेस कार्यसमिति के पन्द्रह सदस्यों में से सरदार पटेल के पक्ष में बारह मत आये थे और नेहरू के पक्ष में एक भी मत नहीं था। जो तीन मत दूसरे सदस्यों को मिले थे वो गाँधी जी ने नेहरू जी के पक्ष में परिवर्तित करवा दिये। महात्मा गाँधी ने श्री पटेल को अपना नाम वापस लेने के लिए बाध्य कर दिया और श्री पटेल ने गाँधी जी का सम्मान रखते हुए अपना नाम वापिस ले लिया। तब श्री गाँधी ने शून्य मत वाले अपने प्रिय श्री नेहरू को प्रधानमन्त्री चयनित करके नेहरू-गाँधी वंश की स्थापना की थी। लोकतन्त्र की खुले तौर पर उपेक्षा करके और सरदार पटेल का अपमान करके उन्होंने काँग्रेस में परिवारवाद का प्रवर्तन किया था। उसी परम्परा में आगे चलकर प्रान्तों में भी अनेक परिवारों ने अपने परिवार को सत्ता में स्थापित कर दिया। उनकी राज्यलिप्सा इतनी बढ़ गई है कि जिनका अपना सगा परिवार नहीं है, तो उन्होंने अपने भाई-भतीजों को सत्ता में स्थापित करना शुरू कर दिया। विडम्बना देखिए, देश-प्रदेश, शासन-प्रशासन के लिए नियम-कानून बनाने का दायित्व जिन प्रतिनिधियों पर है वहाँ ऐसे निरक्षर भट्टाचार्य, अयोग्य व्यक्ति विधायक, सांसद, मुख्यमन्त्री आदि के रूप में पहुँचने लगे जिन्हें नियम पढ़ने भी नहीं आते। यह लोकतन्त्र का मजाक और दुरुपयोग नहीं, तो क्या है? जनता ने अब उनकी इस मानसिकता पर अंकुश लगा दिया है और यह जता दिया है कि गरीब या सामान्य घर का योग्य व्यक्ति भी देश को उनसे अच्छा संभाल सकता है।

तुष्टीकरण की राजनीति के मूल प्रणेता भी महात्मा गाँधी ही हैं। यह पक्षपातपूर्ण नीति स्वतन्त्रता के समय ही आरम्भ हो गई थी। स्वतन्त्रता-कालीन अनेक लेखकों ने लिखा है कि महात्मा जी को विशेषतः मुस्लिम तुष्टिकरण की दीवानगी-सी हो गई थी। वे खुले तौर पर बहुसंख्यक हिन्दू हितों की उपेक्षा कर मुस्लिम हितों को साधने में साम-दाम-दण्ड-भेद के सारे उपाय अपनाते थे। स्वतन्त्रता-आन्दोलन में सफल नेतृत्व और उल्लेखनीय योगदान होने के कारण देश और काँग्रेस में उनका अद्वितीय प्रभाव हो गया था। काँग्रेस में यदि उनकी किसी बात को अनुचित समझकर नहीं माना जाता तो वे अनशन का भय दिखाकर उसे मनवा लेते थे। जिन्ना के आग्रह के आगे झुककर धर्म के आधार पर देश का विभाजन स्वीकृत कर लिया। मुस्लिमों को पाकिस्तान सौंप दिया, उनकी जनसंख्या के अनुपात से भूमि दे दी, संसाधन दे दिये। फिर भी महात्मा गाँधी ने मेवात (हरियाणा) जैसे स्थानों पर पहुँचकर जाते मुसलमानों को भारत में ही रोक लिया। भूमि, सम्पत्ति, संसाधन उनके अनुपात से पाकिस्तान को दिये जा चुके थे फिर भी मुस्लिमों को यहाँ रोक लिया गया और यहाँ की अतिरिक्त भूमि, सम्पत्ति, संसाधन भी उन्हीं के पास रह गये। आज फिर एक नये पाकिस्तान के अन्तर्गत पाकिस्तान के हिन्दू जब भारत लौटने लगे तो मुसलमानों ने उनसे मारकाट की, युवतियों का अपहरण किया, परिवार के सामने उनसे बलात्कार किया। भारत सरकार ने क्रुद्ध होकर पाकिस्तान के देय ५५ करोड़ रुपये न देने का निर्णय किया। महात्मा गाँधी इस निर्णय के विरुद्ध अनशन पर बैठ गये और भारत सरकार से पाकिस्तान को बलात् रुपये दिलवाये। पाकिस्तान से उजड़कर भारत में आये बेघर हिन्दुओं ने घोर सर्दी-बरसात से बचने के लिए कुछ खाली पड़ी

मस्जिदों में डेरा डाला। मुसलमानों की माँग पर महात्मा जी ने उन्हें भयंकर सर्दी में वहाँ से निकलवाकर सड़कों पर ला दिया। हिन्दुओं के हितों के लिए महात्मा न अड़े, न लड़े, न अनशन किया।

एक अमानवीय घटना को भी यहाँ स्मरण किया जाना आवश्यक है। आर्यसमाज के सर्वोच्च नेता, स्वतन्त्रता आन्दोलन के अग्रणी नेता, समाज-सुधारक, शिक्षाविद् मिस्टर गाँधी को सर्वप्रथम 'महात्मा' की उपाधि से विभूषित करने वाले स्वामी श्रद्धानन्द की हत्या बीमारी की अवस्था में अब्दुल रशीद नामक एक मुस्लिम व्यक्ति ने गोली मारकर कर दी थी। श्री गाँधी ने उसको 'भाई' कहकर प्रचारित किया और कहा कि हत्या का दोषी 'भाई रशीद' नहीं अपितु समाज है। रंगे हाथों पकड़े जाने के बाद भी उसे छोड़ दिया गया जबकि श्री गाँधी के हत्यारे नाथूराम गोडसे को फाँसी हुई। पक्षपातपूर्ण तुष्टीकरण की अनेक घटनाएँ हैं। यही नीति काँग्रेस की राजनीति बन गई। यह नीति महात्मा गाँधी से लेकर २०१४ में भाजपा की सरकार आने तक शासन में चलती रही और राजनीति में अब भी अपनाई जा रही है। यह नीति नहीं, एक हथियार है जिसके द्वारा बहुसंख्यक जनता का दमन किया जाता रहा। बहुसंख्यक जनता कसमसाकर रह जाती थी। विवश जनता ने इस पीड़ा को अपनी नियति मान लिया था। स्थिति यहाँ तक खराब कर दी गई थी कि मौनी प्रधानमन्त्री के नाम से विख्यात श्री मनमोहन सिंह जब बोले तो उन्हें यह घोषणा करते हुए रत्ती भर भी संकोच नहीं हुआ कि "भारत के संसाधनों पर पहला अधिकार मुसलमानों का है।" कैसे है? इसका तथ्यात्मक उत्तर कोई नहीं देता कि हिन्दू, सिख, जैन, बौद्ध, पारसी, ईसाई आदि का अधिकार क्यों नहीं है। असल में देश, संस्कृति-सभ्यता की कीमत पर यह वोटों के ध्रुवीकरण की राजनीति है। काँग्रेस की देखा-देखी दर्जनों जो नयी पार्टियाँ खड़ी हुईं वे भी एक-से-एक बढ़कर वोट के लालच में यही राग अलापती हैं। मोदी सरकार ने इस पक्षपात को मिटाया है। बहुसंख्यक जनता प्रसन्न है, उसने जनादेश द्वारा अपनी प्रसन्नता को व्यक्त कर दिया है।

पिछले शासन में 'राष्ट्रवाद' जैसी विचारधारा को दकियानूसी प्रचारित करके राष्ट्रीय भावना को क्षीण कर दिया था। यह अंग्रेजीदां और वामपन्थी लोगों का एजेंडा रहा है। उससे राष्ट्रीय सुरक्षा भी दुष्प्रभावित थी। श्री मोदी ने अपने कार्यकाल में राष्ट्रवाद की भावना और धारणा को पुन: जाग्रत और सशक्त किया है। राष्ट्रीय सुरक्षा सुदृढ़ हुई है और विश्व में भारत का गौरव बढ़ा है। सत्ता-लोलुप लोगों ओर दलों ने विगत वर्षों में अपनी सत्ता स्थापित करने के लिए क्षेत्रवाद को जी-भरकर बढ़ावा दिया और इस चुनाव में भी क्षेत्रवाद को वोट पाने के लिए खूब उठाया, किन्तु बहुत-से क्षेत्रों में लोगों ने क्षेत्रवाद की भावना से ऊपर उठकर जनादेश दिया है। इस प्रकार ये चुनाव सकारात्मक सामाजिक परिवर्तन का शुभारम्भ करने में सफल रहे हैं। इनको भविष्य में आगे बढ़ाना इस सरकार का उद्देश्य बनना चाहिए। सामाजिक परिवर्तन का इस सरकार को स्वर्णिम अवसर मिला है।

लोकतन्त्र में पूजा-अर्चना करना निजी आस्था का विषय है। सभी नेता, अधिकारी अभीष्ट धर्मस्थल में जाते रहे हैं और जा रहे हैं। इस चुनाव ने, विशेषत: श्री मोदी ने जड़-पूजा को जो आकर्षण और दृढ़ता प्रदान की है, उसकी सत्यता समझाने में आर्यसमाज को कितना श्रम और समय लगाना पड़ेगा, यह कहा नहीं जा सकता। यह चुनाव बौद्धिक युग में पौराणिकवाद का पुनरुत्थान है। डॉ. सुरेन्द्र कुमार

दुःखद् समाचार-अपूरणीय क्षति...

योगधाम, ज्वालापुर के योग प्रचारक ऋषिभक्त स्वामी दिव्यानन्द नहीं रहे। आर्यसमाज के विद्वान एवं नेता स्वामी दिव्यानन्द सरस्वती जी, योगधाम, ज्वालापुर-हरिद्वार का दिनांक २८ मई २०१९ को देहावसान हो गया। स्वामी दिव्यानन्द जी विगत लम्बे समय से रुग्ण चल रहे थे और उनका शरीर अत्यन्त कृषकाय हो गया था। स्वामी जी वैदिक साधन आश्रम तपोवन के संरक्षक थे। वह कई दशकों से यहाँ प्रत्येक वर्ष आते थे। यज्ञों के ब्रह्मा बनते थे और सभी उत्सवों पर आयोजित होने वाले वेद पारायण यज्ञों में याज्ञिकों को अपना आशीवाद देने सहित वेदोपदेश भी करते थे। परोपकारिणी सभा स्वामी जी के निधन पर शोक प्रकट करते हुए श्रद्धाञ्जलि अर्पित करती है।

मृत्यु सूक्त-३१

प्रवचनकर्त्ता- डॉ. धर्मवीर

लेखिका - सुयशा आर्य

परोपकारिणी सभा के पूर्वप्रधान डॉ. धर्मवीर जी के वेद-विज्ञान के अन्तर्गत प्रसारित व्याख्यानों की जनोपयोगिता को ध्यान में रखकर 'परोपकारी' में प्रकाशित किया जा रहा है। व्याख्यानों के लेखन का कार्य उनकी ज्येष्ठ पुत्री सुयशा आर्य कर रही हैं। सम्पादक

यथाहान्यनुपूर्वं भवन्ति यथ ऋतव ऋतुभिर्यन्ति साधु।
यथा न पूर्वमपरो जहात्येवा धातरायूंषि कल्पयैषाम्।।

यह ऋग्वेद के १० वें मण्डल के १८ वें सूक्त का पाँचवाँ मन्त्र है। इसका देवता धाता है, विधाता है और इसमें हमारा जीवन कैसा हो इसकी चर्चा की है। इसका ऋषि यामायन: और छन्द त्रिष्टुप है। शब्द बहुत सरल हैं। कहता है कि हमारा जीवन एक प्रवाह की तरह होना चाहिए। यह जो समय है हम समझते हैं कि इसे शायद घड़ी से हम जानते हैं। घड़ी से तो आप इसे मापते हो मगर पिछले समय को आप कैसे जानोगे? हम समझते हैं कि शायद सूर्य के कारण, सूर्य के उदय होने से, अस्त होने से जानते हैं। लेकिन जब सूर्य ही न हो तब भी काल या समय तो है। तो वो जो काल है इसको आप पहचानोगे कैसे?

ये आपने जितने नियम बनाये हैं, ये एकतरफा हैं। ये आपको नाप रहे हैं, काल को नहीं। जैसे आज ही के एक ही दिन, एक व्यक्ति सौ वर्ष का है, एक व्यक्ति पचास वर्ष का है, एक व्यक्ति पाँच वर्ष का है, एक व्यक्ति पाँच दिन का है, एक व्यक्ति पाँच घण्टे का है, एक ही क्षण में। तो यह जो नाप है, यह जो मान है, यह वस्तु का है, काल का कहाँ से है? आप इतने वर्ष से जी रहे हैं, यह आप पर घटित हो रहा है कि आप पाँच वर्ष से जी रहे हैं। लेकिन आज की ही तारीख में दूसरा एक वर्ष का है। तो वो उसका एक और इसके पाँच, वस्तु की, व्यक्ति की अपेक्षा से हैं, काल की अपेक्षा से नहीं। फिर काल का पता कैसे लगेगा? सूर्य भी नहीं होगा, तो काल तो रहेगा, तब काल का कैसे पता लगेगा? तो उसके लिए एक शब्द है 'अनुक्रम', उसकी एक ही पहचान है, जो एक के बाद दूसरा आ रहा है, यह जो एक के पीछे दूसरा चल रहा है, यह जो पीछे आना है यह काल की पहचान है। हम इससे काल को जानते हैं। जैसे पानी के प्रवाह में पानी तो लगातार निकल रहा है, लेकिन एक पानी के पीछे दूसरा पानी है। इसमें क्रम भले ही न टूटा हो लेकिन है तो क्रम। वह जो एक के पीछे एक का होना है, वह पीछे और आगे है यह काल की पहचान है, इसी से काल को जाना जाता है। वैसे ही क्रम से हमको भी काल के अनुसार चलना चाहिए, यह इस मन्त्र का भाव है।

मन्त्र की शब्दावली बड़ी सरल है- **यथाहान्यनुपूर्वं भवन्ति।** कहता है कि दिन कभी आगे-पीछे नहीं होते, न रात कभी आगे-पीछे होती, न रात से पहले दिन आता, न दिन से पहले रात आती। जब रात को आना है तब रात आती है, जब दिन को आना है तब दिन आता है। दिन के पीछे रात और रात के पीछे दिन इसका क्रम है, इस क्रम को कोई बदल नहीं सकता। ऐसा नहीं हो सकता कि चलो दो रात लगातार हो जायें या दो दिन लगातार हो जायें। क्रम बना हुआ है, चाहे कहीं एक घंटे की रात है, कहीं दस घण्टे की रात है, कहीं छ: महीने की रात है, कहता है कि हमारा जीवन, हमारी यात्रा भी इसी क्रम से होनी चाहिए। इसके लिए एक विशेष शब्द का प्रयोग है, **'अनुपूर्वम्'** यह बड़ा महत्त्वपूर्ण शब्द है। **अनुपूर्वम्** अर्थात् जिसे आप बदल नहीं सकते। जो वस्तु जहाँ पर है वह उसी क्रम से आगे बढ़ेगी, उसी क्रम से देखी जाएगी, उसी क्रम से रहेगी।

वैदिक साहित्य में जो मन्त्र हैं, उन मन्त्रों के न तो शब्द

बदले जाते हैं, न क्रम बदला जाता है और यदि शब्द और क्रम बदल जायें तो मन्त्र नहीं रहता है। इसीलिए बहुत सारे लोग यह समझते हैं कि इसमें तो क्रम का, ध्वनि का, बोलने का महत्त्व है, इनका अर्थ नहीं होता है, अर्थ तो इसीलिए होता है कि वही शब्द यदि संसार में आपके काम आ रहा है और आप उसको अर्थवान् देख रहे हैं तो वही शब्द वेद में होते हुए निरर्थक कैसे हो जाएगा? यहाँ मन्त्र में भी सारे ही शब्द तो सार्थक हैं। **यथा**- जैसे, **अहानि**-दिन, **अनुपूर्वम्**-अनुपूर्व से, **भवन्ति**-होते हैं। ये शब्द लोकभाषा में भी काम आ रहे हैं और वे सार्थक हैं। यदि वे मन्त्र में प्रयुक्त होते हैं तो निरर्थक कैसे हो जायेंगे?

इनके वेद मन्त्र होने का महत्त्व क्या है? इनके वेद मन्त्र होने का महत्त्व यह है कि इनका क्रम निश्चित है उसको बदल नहीं सकते। इस क्रम के यथावत् रहने को **आनुपूर्वी** कहते हैं। कहते हैं, वेद मन्त्र नित्य हैं और इनकी आनुपूर्वी भी नित्य है। **मन्त्राः नित्या आनुपूर्वी अपि नित्या।** मन्त्र तो हैं ही नित्य और उनका क्रम भी नित्य है। **अग्निमीळे** को आप **ईळे अग्निं** नहीं कर सकते, यदि **ईळे अग्निं** कर दिया तो वह मन्त्र नहीं रहेगा, उसको आप मन्त्र नहीं कह सकते। तो यह **आनुपूर्वी** वेद का बहुत ही महत्त्वपूर्ण शब्द है। मतलब वेद में और ब्राह्मण में सबसे बड़ा अन्तर है कि आप ब्राह्मण में आनुपूर्वी को हटा देते हो। व्याख्यान में मन्त्रों की आनुपूर्वी को हटा देते हो। किन्तु जब वेद को पढ़ते हो तो आनुपूर्वी क्रम से पढ़ते हो, उसी क्रम से पढ़ते हो। उसमें आप फेर-बदल नहीं कर सकते, उसी स्वर में, उसी छन्द में, उसी लय में सब पढ़ते हो। यह आनुपूर्वी प्राकृतिक क्रम का नाम है, दिन और रात के क्रम का नाम है, सूर्य और चन्द्र के क्रम का नाम है, पानी के प्रवाह का नाम है, वायु के प्रवाह का नाम है। यह एक के बाद एक चल रहा है। मन्त्र कहता है कि जैसे **अहनि** अर्थात् दिन है, यह एक के पीछे एक आता है, न यह रुक सकता है, न आगे जा सकता है **यथ ऋतव ऋतुभिर्यन्ति साधु**- यह क्रम दिनों का है, यही क्रम मासों का है, यही क्रम ऋतुओं का है, यही क्रम अयन का है, यही क्रम संवत्सर का है। हमारी ईकाई दिन है, दिन के बाद पक्ष है, पक्ष के बाद मास है, मास के बाद अयन है और अयन के बाद संवत्सर है। यह मन्त्र कहता है कि ऋतुएँ भी उसी क्रम से आती हैं। हम देखते हैं पहले ग्रीष्म ऋतु थी, फिर वर्षा आई, फिर शरद, हेमन्त, शिशिर, वसन्त, यही क्रम निरन्तर चलता रहता है। जब संसार में ही क्रम नहीं टूट रहा, तो तुम्हारे जीवन का क्रम क्यों टूटना चाहिए? तुम्हारे जीवन का क्रम भी उसी तरह से क्यों नहीं होना चाहिए? तुम भी वैसा ही क्रम से जीवन बिताओ जैसी संसार की वस्तुओं में क्रमबद्धता है। वही क्रमबद्धता, वही लय तुम्हारे जीवन में भी होनी चाहिए। **यथाहान्यनुपूर्वं भवन्ति यथ ऋतव ऋतुभिर्यन्ति साधु।**

हम संसार की वस्तुओं में क्रम देख रहे हैं, संसार में पृथ्वी के घूमने में क्रम देख रहे हैं, सूर्य के उदय होने में, अस्त होने में क्रम देख रहे हैं, हम दिन के आने और जाने में क्रम देख रहे हैं, रात्रि और दिन के बीच में क्रम देख रहे हैं। इस मन्त्र में एक विशेष शब्द दिया है- **साध** अर्थात् इनमें कोई उठा-पटक नहीं है, कोई उतावलापन नहीं है, अव्यवस्था नहीं है, कोई होड़ नहीं है, साधु अर्थात् ठीक-ठीक, अच्छे ढंग से। जैसे सहज भाव से, जैसे व्यवस्था से ऋतुएँ जा रही हैं, उसी क्रम से हमारा जीवन भी जाए। **यथाहान्यनुपूर्वं भवन्ति यथ ऋतव ऋतुभिर्यन्ति साधु।**

अगला वाक्य कहा- **यथा न पूर्वमपरो जहाति** जो बाद वाला है वो पहले को **न जहाति**= छोड़कर न चला जाए। बाद में आने वाला पहले वाले को छोड़कर जाए, यह व्यतिक्रम हो जाएगा, त्रुटि हो जाएगी, यह प्राकृतिक नहीं होगा, सहज नहीं होगा। यह दुःखद हो जाएगा। जो सहज है वह सुखद है। जो व्यवस्था में है वह सुखद है, पूर्णता उसी में है। जो क्रम में है वही पूर्ण है। जब क्रम टूट जाता है तो अपूर्णता होती है, व्यवधान होता है, अव्यवस्था होती है। जिस समाज में, जिस समूह में, जिस परिवार में यह क्रम बना हुआ है उसको कोई नहीं तोड़ता। यदि यह क्रम यथावत् चल रहा है, तब आकस्मिक दुःख नहीं होता है। परमेश्वर से प्रार्थना भी है और व्यवस्था के लिए निर्देश भी है, कि परमेश्वर ऐसी कृपा करे कि हमारे बीच से कोई बाद में आने वाला, पहले वाले को छोड़कर न चला जाए। बाद में आने वाला बाद में जाए, जो पहले आया है वो पहले जाए। ऐसा न हो कि बाद में आने वाला पहले आने

वाले के सामने चला जाए। यहाँ परमेश्वर के लिए एक विशेष सम्बोधन है- **धातः 'धातारायूंषि कल्पयैषाम्।'**

प्रत्येक शब्द का अपना एक विशेष अर्थ है। तो यहाँ कहा है **धातः एषाम् आयूंषि कल्पय-** हे प्रभु! इनकी आयु को तुम इस तरह का बना दो, इस तरह से व्यवस्थित कर दो कि बाद में आने वाला पहले न जाए। इस तरह का यदि हम बना देंगे तो इस संसार में जो अधिकांश दुःख है वो अपने आप समाप्त हो जाएगा। इसको करने के लिए यह मन्त्र बड़े सहज भाव से निर्देश दे रहा है कि हम अपनी सारी व्यवस्था को इस तरह का बनायें, इस सहज भाव से हम जीवित रहें और संसार की सारी ऋतुएँ साधु बन कर रहें। अर्थात् जब वर्षा होनी हो और न हो तो असाधु हो जाएगा। जब ग्रीष्म ऋतु में गर्मी न हो तो असाधु हो जाएगा। जो दिन हैं, वे जिस ऋतु के हैं, जिस तरह के फल के हैं, जिस तरह की वनस्पति के हैं, वैसे ही हों। ऐसे ही मनुष्य की जो बाल्य अवस्था है, शैशव की अवस्था है, किशोर अवस्था है, कुमार अवस्था है, युवा अवस्था है, प्रौढ़ अवस्था है, जरा अवस्था है, वृद्धावस्था है, इनमें एक भी दुःखदायक नहीं है, यह क्रम है, यह साधु है। अर्थात् यह चलने का एक सहज मार्ग है। हम जिस-जिस भी परिस्थिति से हो कर जा रहे हैं, जिस क्रम से हम निकल रहे हैं, वह क्रम हमारे लिए कभी दुःखद नहीं हो सकता, गलत नहीं हो सकता, क्योंकि वह व्यवस्था से बना हुआ है। निश्चित रूप से हमारी बाल्यावस्था के बाद हमारी युवावस्था, और हमारी युवावस्था के बाद हमारी वृद्धावस्था आती है। मन्त्र कह रहा है कि आप इसी को यदि लेकर चलते हैं, यदि आपके जीवन में कहीं भी क्रम नहीं पलटता है, तो आपको फिर कभी दुःखी होने की आवश्यकता नहीं है, आप के लिये कोई कष्ट का कारण नहीं है। यह कष्ट अव्यवस्था से पैदा होने वाला है और इस मन्त्र में हर तरह से मनुष्य के जीवन के लिये व्यवस्था की बात कही है, क्रम की बात कही है, अनुक्रम की बात कही है।

मन्त्र का शब्दार्थ बनता है कि **यथाहान्यनुपूर्वं भवन्ति** जैसे दिन एक के बाद एक आते हैं, **यथ ऋतव ऋतुभिर्यन्ति साध** जैसे एक के बाद एक ऋतुएँ आती हैं और अपने-अपने कार्यों को सहज भाव से सम्पन्न करती हैं, वैसे ही यह मनुष्य का जीवन भी, **यथा न पूर्वमपरोजहाति,** यह जिस क्रम से संसार में आया है, उसी क्रम को प्राप्त होते हुए जाए। इस जीवन की अच्छाई क्या है, इसकी श्रेष्ठता क्या है, सम्पूर्णता क्या है- इसका व्यवस्थित होना है। **धातरायूंषि कल्पयैषाम्।** इनकी आयु की ऐसी ही व्यवस्था होना मृत्यु से बचने का उपाय है।

लेखकों से निवेदन

- लेखक कृपया अपने मौलिक व अप्रकाशित लेख ही भेजें।
- लेखक अपना पूरा पता व चल-दूरभाष संख्या लेख के साथ अवश्य लिखें।
- परोपकारिणी सभा द्वारा रचनाओं के लिए किसी प्रकार का भुगतान नहीं किया जाता है।
- अपनी रचना की एक प्रति कृपया अपने पास रखकर भेजें, क्योंकि अस्वीकृत रचनायें डाक द्वारा लौटाई नहीं जाती हैं।
- रचना के प्रकाशन में छः माह या अधिक समय भी लग सकता है, अतः कृपया तब तक रचना को अन्यत्र न भेजें।
- स्वीकृत रचना परोपकारी के किसी आगामी अङ्क में देखी जा सकती है। **-संपादक**

विद्वान् एकमत हो प्रीति से वर्तें

यद्यपि आजकल बहुत से विद्वान् प्रत्येक मतों में हैं, वे पक्षपात छोड़, सर्वतन्त्र सिद्धान्त अर्थात् जो-जो बातें सबके अनुकूल सब में सत्य हैं, उनका ग्रहण और जो एक-दूसरे के विरुद्ध बातें हैं, उनका त्याग कर परस्पर प्रीति से वर्तें-वर्तावें तो जगत् का पूर्ण हित होवे। क्योंकि विद्वानों के विरोध से अविद्वानों (साधारण जनों) में विरोध बढ़कर अनेकविध दुःख की वृद्धि और सुख की हानि होती है। (स. प्र. भू.)

कुछ तड़प-कुछ झड़प

प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'

लाज लुटती बचाई श्रीकृष्ण की- कोई साठ साल पुरानी घटना है। हरियाणा के दो निष्ठावान् कृषक ऋषि-भक्त कुछ धर्म-चर्चा कर रहे थे। दोनों ही बहुत भोले-भाले ग्रामीण आर्य थे। एक यादव परिवार में जन्मा था तो दूसरा एक जाट कुल का सपूत था। बातों ही बातों में ऋषि की महिमा चर्चा का विषय बन गया। यादव भाई बोला, महर्षि दयानन्द जी को हम यादवों से विशेष स्नेह था। देखो! ऋषि ने हमारे बाबा श्रीकृष्ण महाराज के लिये कितने सुन्दर मार्मिक शब्द लिखे हैं कि उन्होंने जन्म से लेकर मरणपर्यन्त कोई पाप नहीं किया। और किस के लिये ऋषि ने ऐसा लिखा है?

इस पर वह दूसरा आर्य जाट भाई बोला, ''न भाई! ऋषि जी को हम जाटों से सर्वाधिक प्यार था। जो हमें ऋषि ने सम्मान दिया है वह और किस को दिया है? ऋषि ने हमें 'जाट जी' लिखा है और किसके लिये ऐसा लिखा है? दोनों एक-दूसरे के कथन को काट न सके। दोनों के कथन सत्य हैं।''

इतने लम्बे समय के पश्चात् मैक्समूलर साहब की पुस्तक My Indian Friends के उत्तर में लिखी गई अपनी प्रकाशनाधीन पुस्तक 'मैक्समूलर का एक्स रे' पर बोलते हुये हमें उपरोक्त घटना याद आ गई। महर्षि ने दो बार भागवत पुराण वाले के लिये यह लिखा है कि भागवतादि पुराणों के बनाने वाले जन्मते ही क्यों नहीं गर्भ ही में नष्ट हो गये? नि:सन्देह ऋषि का यह कथन अत्यधिक कठोर है। ऋषि ने रामस्नेही साधुओं के लिए भी इतना ही कठोर शब्द 'राण्ड स्नेही' प्रयुक्त किया है। महर्षि के कोमल हृदय को इनके आचरण व क्रूरता से जो चोट पहुँची तो उनका घायल हृदय महात्मा कृष्ण का अपमान न सह सका। राजस्थान के मारवाड़ क्षेत्र में 'आचार-विचार का नाश करने वाले' 'राम स्नेही साधु' शब्द लिखकर 'चाँद' पत्रिका में मारवाड़ विशेषाङ्क में उनका जो चित्र छपा था वह हमारे पास सुरक्षित है। उससे पता चलता है कि ऋषि दुराचरण को कदापि सहन नहीं कर सकते थे। यह ऐतिहासिक चित्र उसकी पुष्टि करता है।

विधर्मियों ने विदेशियों ने श्रीकृष्ण की निन्दा में किस सीमा तक लिखा है यह तथाकथित हिन्दू सन्त व नेता क्या नहीं जानते? लाला लाजपतराय जी ने कभी लिखा था कि संसार के सब सुधारकों का उनके विरोधियों ने अपमान व विरोध किया, परन्तु श्रीकृष्ण एक ऐसे महापुरुष, सुधारक और विचारक हुये हैं **जिनके तथाकथित भक्तों ने उनका घोर अपमान किया है।**

ऋषि की अनूठी ऊहा का क्या कहना! आपने लिखा है कि जो दोष श्रीकृष्ण पर लगाये जाते रहे हैं उनका महाभारत में कतई कोई संकेत नहीं मिलता। श्रीकृष्ण जी पर लगाये जा रहे दोषों का लाभ उठाने वाले विदेशी पादरियों में भी ऋषि के उपरोक्त कथन ने हड़कम्प मचा दिया। उनको भी महर्षि के कथन का प्रतिवाद करने की हिम्मत न हुई। मर्डोक नाम के ईसाई पादरी ने इस कथन को स्वीकार किया है।

परोपकारिणी सभा द्वारा प्रकाशित 'कुल्लियाते आर्य मुसाफिर' में हमने पाद टिप्पणियों में यह दुर्लभ प्रमाण दिया है। शिशुपाल ने श्रीकृष्ण का जी-भरकर अपमान किया, परन्तु भागवत पुराण में वर्णित किसी लाञ्छन की गंध उसकी गालियों में भी नहीं मिलती।

प्रबुद्ध पाठक यह जानकर आश्चर्य करेंगे कि जब विधर्मी विरोधी श्रीकृष्ण की पुराण वर्णित लीलाओं पर गन्दी-गन्दी पुस्तकें व लेख लिखकर हिन्दुओं को धर्मच्युत कर रहे थे तब देश का न कोई नेता बोला और न साधु-सन्त धर्म-रक्षा को आगे आया। मैक्समूलर ने तो बड़ी चतुराई से श्रीकृष्ण की धज्जियाँ उड़ा दीं। न गाँधी बोले, न जवाहरलाल, न मौलवी धर्म-रक्षा कर सके, न विवेकानन्द स्वामी।

मैक्समूलर के साथ गये- ऋषि दयानन्द के पश्चात् लाला लाजपतराय पहले राष्ट्रीय नेता थे जिन्होंने ऋषि से प्रेरणा पाकर श्रीकृष्ण पर एक पठनीय पुस्तक लिखी। आर्यसमाज ने श्रीकृष्ण जी की लुटती लाज बचाने के लिये

महाशय राजपाल जी का गौरवपूर्ण बलिदान देकर इतिहास रचा। मैक्समूलर की घिनौनी पोथी का उत्तर तो किसने देना था? हिन्दू समाज के तथाकथित हिन्दुत्व रक्षक कई बड़े लीडरों ने उल्टा मैक्समूलर की प्रशंसा के पुल बाँधे।

यह तो राष्ट्र-निर्माता, शूरता की शान श्रद्धानन्द थे जिन्होंने मैक्समूलर के प्रहार का तत्काल प्रतिकार किया। अब पं. लेखराम जी के 'कुल्लियाते आर्य मुसाफिर' के पश्चात् उसी कोटि के प्रमाणों से परिपूर्ण मौलिक पुस्तक 'मैक्समूलर का एक्स रे' प्रकाशनाधीन है। निश्चय ही इससे सारे हिन्दू समाज का सिर ऊँचा होगा। जाति का कृतज्ञ हृदय आर्यसमाज के इस उपकार का मूल्याङ्कन करके महान् श्रद्धानन्द को श्रद्धा से नमन करेगा या नहीं, यह तो कहना कठिन है। आग्नेय पुरुष प्राणवीर, गौरवगिरि पं. लेखराम से लेकर पं. शान्तिप्रकाश, पं. गंगाप्रसाद उपाध्याय, लौहपुरुष स्वामी स्वतन्त्रानन्द तक सभी आर्य धर्मरक्षक विभूतियों के उर के अरमानों, वलवलों की आग, जोश व उत्साह के दर्शन इस पुस्तक के एक-एक शब्द व एक-एक पंक्ति में होंगे। यह सब समर्पित पूर्वजों की सतत साधना का फल आप चखेंगे।

ऋषि का वह ऐतिहासिक वाक्य- "जो लोग कहते हैं कि जर्मनी देश में संस्कृत विद्या का बहुत प्रचार है, और जितनी संस्कृत मोक्षमूलर साहब पढ़े हैं उतनी कोई नहीं पढ़ा, यह बात कहने मात्र को है। क्योंकि **यस्मिन् देशे द्रुमो नास्ति तत्रैरण्डो द्रुमायते** अर्थात् जिस देश में कोई वृक्ष नहीं होता, उस देश में एरण्ड ही को बड़ा वृक्ष मान लेते हैं।" अंग्रेजी राज में सूर्यास्त कभी नहीं होता था। उस अंग्रेजी साम्राज्य द्वारा महिमामण्डित मैक्समूलर के विषय में ऋषि के इस वाक्य को कैसे यथार्थ माना जा सकता है? अंग्रेजी पठित बाबू इस पर हँसते हैं। पं. जवाहरलाल जैसे राजनेता जिसका गुणकीर्तन करते हैं उसके विषय में ऋषि के इस वाक्य पर लोग क्यों न हँसें? यह शंका या यह प्रश्न ठीक है।

श्री स्वामी वेदानन्द जी ऋषि के प्रत्येक विचार की पुष्टि में प्रमाण जुटाने की प्रेरणा दिया करते थे। हम अपने पाठकों को आगे की घटना ध्यानपूर्वक पढ़ने की विनती करते हैं। जर्मनी निवासी एक गम्भीर विद्वान् की पुस्तक में आगे की घटना मिलती है। यह प्रसंग स्वयं मैक्समूलर ने लिखा है। काला कोट पहने एक व्यक्ति मेरे कमरे में प्रविष्ट हुआ। कुछ बोला। मैं उसकी बात समझ न सका। पूछा, कौनसी भाषा बोल रहे हो? फिर उसने पूछा, क्या संस्कृत जानते हो? उसे मैक्समूलर ने कहा, 'नहीं।' एक शब्द भी न समझ सका। वह व्यक्ति मैक्समूलर द्वारा अत्यन्त प्रशंसित पादरी नीलकण्ठ शास्त्री था। पता चला कि मैक्समूलर न संस्कृत समझ सकता था और न लिख सकता था। बड़े-बड़े संस्कृत ग्रन्थों का सम्पादन किया। इस रहस्य को रहस्य ही रहने दें।[१] 'लम्बी टाँगों वाले झूठ' अंग्रेजी ग्रन्थ में मैक्समूलर के बारे चौंकाने वाली सप्रमाण पर्याप्त सामग्री है।

ज्ञान घोटाला- पश्चिमी गोरे गुरुओं के संस्कृत साहित्य के अगाध ज्ञान के विषय में हम बहुत कुछ सुनते व पढ़ते आये हैं। अब जीवन की साँझ में जर्मनी निवासी एक विद्वान् के खोजपूर्ण ग्रन्थ Lies with Long Legs को पढ़ा तो पता चला है कि ये गोरे गुरु (मैक्समूलर सहित) कोई भी कभी भारत में किसी संस्कृतज्ञ से संस्कृत पढ़ने नहीं आये। भारत के एक राज्य अधिकारी ने एक ब्राह्मण से अवश्य कुछ संस्कृत सीखी। सब पश्चिमी ईसाई संस्कृत स्कॉलरों के जीवन पर बहुत कुछ लिखा गया है। किसी के भी बारे में यह जानकारी नहीं मिलती कि इन्हें संस्कृत का ज्ञान कैसे हुआ? यह भी बताया गया है कि सन् १८०३ से पूर्व पश्चिम में कहीं भी संस्कृत पढ़ाई नहीं जाती थी। मैक्समूलर का संस्कृत का गुरु कौन था? अब यह किससे पूछें? स्वामी विवेकानन्द जी मैक्समूलर के बड़े प्रशंसक प्रेमी थे। वह भी यह बताकर नहीं गये कि मैक्समूलर को संस्कृत सिखाने वाला कौन था? इनके लिये संस्कृत साहित्य के ग्रन्थों का लेखन व सम्पादन कौन करता था? **इस रहस्य को रहस्य ही बना रहने दिया जावे?** इस छल-कपट से पर्दा कैसे उठेगा? हमारे इन विचारों को पढ़कर कई जन चौंकें, परन्तु हम तो पश्चिम में बैठे एक गुणी ज्ञानी की खोज से आपको लाभान्वित कर रहे हैं। आर्यसमाज में भी एक-दो को हमने गोरों के ज्ञान का बखान करते बहुत देखा व पढ़ा।

अपने इतिहास को मिटाने दबाने वाले- श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी ने अपने निधन से कुछ पूर्व आर्यसमाज

को प्रेरित किया था कि अपने इतिहास की सुरक्षा सजगता से करो और लिखो। हैदराबाद के मुक्ति आन्दोलन व जन-जागरण के लिये आर्यसमाज के बलिदानों को इतिहास में स्थान मिले इसके लिये पं. नरेन्द्र जी को विशेष रूप से निर्देश किया। हमारे एक परिचित हैदराबादी को दीनानगर में कहा, ''सरकारें आर्यों की तपस्या व बलिदानों को भूल जावेंगी।'' वही कुछ हो के रहा। वह पिंजरा पता नहीं कहाँ गया, जहाँ दक्षिण के एकमेव क्रान्तिवीर पं. नरेन्द्र जी को जंगल में रखा गया। वहाँ वह पिंजरा न पाकर मेरा कलेजा फट गया।

स्वामी जी एकमेव ऐसे साधु थे जिन पर सेना में विद्रोह फैलाने के आरोप में शाही किला लाहौर में बन्दी बनाकर अभियोग चलाया गया। चौधरी छोटूराम व महाशय कृष्ण अनुरोध करके उन्हें दी गईं यातनाओं का वृत्तान्त ले सकते थे। उनकी डायरियों में से हमने बहुत कुछ खोज निकाला। श्री जयप्रकाश जी नारायण को भी लाहौर ही रखा गया। उनकी पुस्तक Inside Lahore Fort की देशभर में चर्चा है। पत्थरहृदय संस्थावादी आर्यसमाजियों ने लौहपुरुष ग्रन्थ में दी गई लाहौर दुर्ग में महाराज की आपबीती को प्रचारित ही नहीं किया।

ठाकुर रौशन सिंह दृढ़ आर्यसमाजी थे। पुत्र को आपने महाविद्यालय ज्वालापुर में प्रविष्ट करवाया। उन पर लिखते हुये हमने उनके आर्यत्व पर प्रकाश डाला है।

स्वामी सोमदेव जी की जीवनी पर- आर्यसमाज में स्वामी सोमदेव जी की चर्चा करने का फैशन अच्छा चल रहा है। उन पर लिखने वाले इन तथाकथित इतिहासकारों में से किसी ने भी यह नहीं लिखा कि पं. लेखराम जी के बलिदान के पश्चात् उनके जीवन-चरित्र के लेखन को सिरे चढ़ाने का आन्दोलन स्वामी सोमदेव जी ने जोर-शोर से छेड़ा था। श्री रामप्रसाद बिस्मिल ने भूलवश उनका 'जन्म लाहौर में हुआ' लिख दिया। अब नये इतिहासकारों ने मेरी पुस्तकों से सामग्री लेकर उनका जन्म वज़ीराबाद का लिखना आरम्भ कर दिया है। उन्हें महाशय कृष्ण जी का लंगोटिया भी लिखा जाने लगा है। यह प्रशंसा योग्य बात है, परन्तु वह महाशय जी के लंगोटिये थे इसका प्रमाण देने मे क्यों डर लगता है?

महाशय कृष्ण जी ने मेरे पूछने पर कृपापूर्वक जो पत्र मुझे भेजा, वास्तव में इसका आधार **वही ऐतिहासिक पत्र है**। इसका फोटो देखकर अब ऐसा लिखा जा रहा है। वह पत्र भी हमारे पास सुरक्षित है। महाशय जी ने प्रताप में हमारा लेख भी पढ़ा और पत्र भी प्राप्त कर प्रताप दैनिक में स्वामी सोमदेव जी व बिस्मिल जी पर एक महत्त्वपूर्ण सम्पादकीय भी लिखा था। उसमें भी इस सेवक का नामोल्लेख था। इतिहास की काँट-छाँट करने से इतिहास की सुरक्षा नहीं होगी। ऐसा करना इतिहास प्रदूषण है। ऐसा करने वाले मैक्समूलर वंशी हैं।

क्या लिख रहे हो?- स्वामी सत्यप्रकाश जी साहित्यकार पं. गंगाप्रसाद उपाध्याय की चर्चा में तो रस लिया करते थे। अपने पिता श्री की, उनके परिवार की चर्चा से बच के रहते थे। एक बार हमारे प्रश्न, ''उपाध्याय जी ने रुग्ण रहे हुये भी बुढ़ापे में इतने उत्तम ग्रन्थ कैसे रच डाले?'' पर आपने बताया, ''आप जैसे उनके भक्त शिष्य सदा उन्हें पत्र लिख-लिखकर यही पूछते रहते थे कि क्या लिख रहे हो? और ऐसे भी पत्र आते रहते थे कि यह लिख दो, इस विषय पर पुस्तक लिख दो...'' जिस दिन कुछ नहीं लिखा गया उस दिन वे भोजन करना भी ठीक नहीं मानते थे। ऋषि-मिशन की सेवा सर्वोपरि समझते थे।

ठीक यही स्थिति अब जीवन की साँझ में हमारी है। देश-विदेश से ''क्या लिख रहे हो? इस विषय पर पुस्तक लिख दो, इसका उत्तर लिख दो।'' मास्टर आत्माराम जी की जीवनी की प्रबल प्रेरणा श्री राठी जी ने दी तो हमने लेखनी उठा ली। अपने ८९ वें जन्मदिन पर शुभ कामनाओं व बधाई का सन्देश चलभाष पर आया तो हमने उसी दिन प्रभात काल में ढाई बजे पत्रकार शिरोमणि आर्यनेता, जलियाँवाला हत्याकाण्ड के अभियुक्त महाशय कृष्ण जी के ऐतिहासिक पुराने लेखों का अनुवाद तथा सम्पादन आरम्भ कर दिया। ईश्वरेच्छा पर सब कुछ छोड़ रखा है। प्रभु से कुछ नहीं माँगता। बस! ''जीवन की अन्तिम श्वास तक यह लेखनी चलती रहे।'' लेखनी चल रही है। चलेगी। एक-एक श्वास ऋषि मिशन सेवा में जावे। यही कामना व चाहना है।

टिप्पणी-१. द्रष्टव्य Lies with Long Legs page 383

ईश्वर से कैसे मिलें?

स्वामी सर्वदानन्द

स्वर्गीय स्वामी सर्वदानन्द जी वीतराग संन्यासी और सच्चे सन्त थे। अभिमान, क्रोध, लोभ और मोह से सर्वथा दूर उनके जीवन के अनमोल अनुभव इन पृष्ठों में पढ़ सकते हैं। -सम्पादक

ईश्वर भक्ति की चार मंजिलें (काण्ड) हैं। संस्कृत भाषा में इनके नाम ज्ञान, कर्म, उपासना और साक्षात्कार हैं। एक का दूसरे से बड़ा ही गहरा सम्बन्ध है। एक के सुधरने में दूसरे का सुधार और बिगड़ने में बिगाड़ है। इसी कारण से कर्म-काण्ड पर भलीभाँति आचरण करने से मनुष्य विवेकी हो सकता है और उपासना की मंजिल में शान्ति प्राप्त होती है।

निश्चय शक्ति के दृढ़ हो जाने से 'ज्ञान-काण्ड' को बड़ी ही सहायता मिलती है। ये सब दृढ़ विश्वास की मंजिल की सीढ़ियाँ हैं। फिर मनुष्य साक्षात्कार में विश्वास प्राप्त करके दृढ़ निश्चय की ओर झुकता जाता है। इसके बाद ईश्वर-भक्त की विचारधारा उस एक ओंकार की ओर बहकर अन्त में एकता में लीन हो जाती है।

दुई[1] का परदा उठे दिलों से, न याद मैं हूँ न और तू हो,
यह चाहे चाहत में तेरे भगवन्! हमेशा डूबा दिल सबू हो,
जिधर से देखूँ, नजर तू आए, तेरा ही जलवा हर एक सू[2] हो,
न हो मिजाजी[3] से दिल की रगबत[4], हकीकी[5] में यार मूबभू हो।

बस यहाँ ही मनुष्य की चेष्टाएँ समाप्त हो जाती हैं। (क्या था-अब क्या हो गया-कुछ कहने में नहीं आता-एक मामूली भेद से प्रभु से वियोग हो जाता है) यह ईश्वर-भक्तों का इशारा है, समझ लिया इसे जिसने उसका दुनिया से किनारा है।

हुक्म है शरअ[6] का तू हो पाक-दिल[7],
हो नेक, सबसे मुहब्बत से मिल।

कर्मकांड

नेक काम मनुष्य को नेक बनाता है और बुरे कामों से मनुष्य बुरा बन जाता है। नेक काम से हृदय शुद्ध होता और बुरे काम से अज्ञान बढ़ता है। नेक आदमी प्रभु का इच्छुक और इच्छाओं का, जो मनुष्य को बुरे कामों की ओर खींचती है, दमन करता है। पापों का रास्ता खुल जाने से संसार में कष्ट और मुसीबतें दिन-प्रतिदिन बढ़ती जाती हैं। कर्मण्यता मनुष्य को पापों से हटा कर कल्याण मार्ग पर अग्रसर करती है। बुरे काम न करो-दु:ख पाओगे, कमजोर हो जाओगे। यह बात सत्य है कि कोई भी पुरुष शुरू से ही अपने-आप बुरा या भला नहीं है। जिस स्टेशन पर वह खड़ा है उसके एक ओर बुराई और दूसरी ओर भलाई है। यदि बेसमझी से वह अपने कदम को बुराई की ओर बढ़ाता है तो उतना ही अधिक भलाई से दूर हो जाता है। पर यदि वह सोच-समझ कर पुण्य-मार्ग को ग्रहण करता है, तो उतना ही अधिक सुख पाता है। यही चक्कर आगे चलता हुआ एक को तो प्रभु से जा मिलता है और दूसरे को संसार में घुमाता रहता है, परन्तु आजकल सिद्धान्त भी बदल गया है- जिस काम के करने से मनुष्य का हृदय पवित्र और अन्त:करण शुद्ध हो, उसे तो कोई विरला ही निभाता है। जिससे सबको आराम हो, दु:ख-सुख में परस्पर सहयोग हो, अन्याय से किसी को कष्ट न हो, उस काम को कोई-कोई ही करता है। आजकल हर कोई बाहरी आडम्बरों का शौकीन है और इनके विरुद्ध कही गई बातों पर कान तक नहीं धरता।

जैसे कोई मत ईश्वर की पूजा बिल्कुल चुपचाप करना अच्छा मानते हैं और कोई घंटा, घड़ियाल बजाकर पूजा-पाठ करना ठीक मानता है, कोई माला से ईश्वर को जपता है तो दूसरा अग्नि को तपता है, एक का मुख पश्चिम को है तो दूसरे का पूर्व को, किसी ने मोक्ष को कैसे माना है, तो दूसरे ने उसे उल्टा जाना है। इस विषय में कहाँ तक कहें, हर एक मत ने अपने को दूसरे से पृथक् करने का कोई न कोई निराला ढंग निकाला हुआ है। वे किसी हद तक ठीक हो सकते हैं यदि वास्तविकता को ठीक रखने में सहायक हों, पर ऐसा तो न हुआ। मनुष्य ने बाह्य आडम्बर को ही सब कुछ मानकर असलियत को खो

दिया, जिससे यह संसार झगड़ों का केन्द्र बन गया। धर्म की तो यह आज्ञा थी कि मनुष्य नेक और शुद्ध आचरण करता हो, उसके हृदय में घमण्ड और अभिमान न हो, एक-दूसरे के साथ प्रेम का बर्ताव करे। शत्रुता के बीज बोने से और फसाद करने से सदा डरे- यह तो न हुआ। ढोंग को वास्तविकता का स्थान देने से सैकड़ों प्रकार के बखेड़े होंगे। यह तो ठीक है कि मनुष्यों में कुछ न कुछ भेद होता है, परन्तु इस भेद की अधिकता को जमाना शत्रुता कहता है। असूल तो झगड़ों को मिटाता है। इसकी अज्ञानता से मनुष्य झगड़ों को उठाता है। असलियत तो यह है-

नेकी की ताकत नहीं तो बदी" से परहेज कर।
अपने ऊपर जुल्म करने से सदा ईश्वर से डर।।

मनुष्य का मुख्य कर्त्तव्य है कि वह शुभ काम करने वाला ही बने। यदि इसमें यह शक्ति न हो तो बुरे कामों से दूर रहना तो आवश्यक है। यह तरीका तो संसार के हित और कल्याण का है। जब मनुष्य अपने स्वभाव को बुराई से हटाकर उसके प्रभाव को दिल से मिटा देता है, तब उसका स्वयं नेकी करने का स्वभाव हो जाता है। चित्त की प्रवृत्ति किसी न किसी ओर होनी आवश्यक है। बुराई का स्रोत बन्द होते ही भलाई का मार्ग आप ही खुल जाता है। जो मनुष्य किसी के साथ बुराई करता है वह आज नहीं तो कल मुसीबत में फँसता है। अन्याय से किसी को दुःख पहुँचाना अपने आपको स्वयमेव मुसीबतों में फँसाना है। परमात्मा दुःखनाशक है-अतः जो मनुष्य किसी को मुसीबत से बचाता है वह भी अपनी योग्यता के अनुसार प्रभु के इस गुण का भागी बन जाता है, फिर कभी वह कष्ट नहीं पाता। प्रभु स्वतन्त्र है-अतः जो कोई किसी को बन्धन से मुक्त कराता है, वह मुक्ति-पद को पाता और प्रभु के समीप हो जाता है। प्रभु दयालु है- अतः जो किसी पर दया करता है वह अमरत्व प्राप्त कर कभी नहीं मरता। हर हाल में खुश रहना, बुरी बात मुख से कभी न कहना, सुख-दुःख के आघात को शान्तिपूर्वक सहना परमेश्वर की आज्ञा है।

इनके बदले में मनुष्य स्वास्थ्य, प्रसन्नता और सम्मान पाता है, इसलिए मनुष्य बुरे कामों से बचे और भलाई के लिए आगे बढ़े। संसार के किसी मनुष्य को दुःख देना किसी धर्मवान् का कर्त्तव्य नहीं है। मेरे मित्र! आप तनिक इन उसूलों पर ध्यान दें कि ये मनुष्य को दुनिया के रास्ते से निकाल कर प्रभु से मिलाप की ओर किस प्रकार ले जाते हैं। जो मनुष्य को अन्याय से कष्ट पहुँचाता है वह प्रभु से दूर हो जाता है। भलाई करना, बुराई से परे रहना और परहेजगारी का जीवन बिताना परमेश्वर को प्राप्त करने का एक विशेष मार्ग है और किसी भी ईमानदार को जो सच्चे अर्थों में धर्मवान् है, दूसरों को कष्ट देने का ध्यान तक नहीं हो सकता। धर्म एक सच्चा मार्ग है, जो प्रभु तक जा पहुँचता है-इस पर चलने वाला कभी भटकता नहीं। वह उपाय जो प्रभु से मिलाप में सहायक हो, उस पर आचरण करने से कौन कष्ट पाता है? मनुष्य की गिरावट का मुख्य कारण दूसरों को दुःख पहुँचाना ही है-

बुराई या भलाई जो हैं करते,
सदा उसका हैं वैसा फल वे भरते।

मनुष्य बुरे वा भले काम के प्रभाव से कभी नहीं बच सकता। यह नियम बड़ा मजबूत और बारीक है। सारा संसार इसी नियम के अनुसार चल रहा है। किसी के पाँव सफलता चूम रहे हैं तो कोई अपने (व्यक्तित्व) को ही मिटा रहा है। विशारदों ने इसकी खोज की है। यह नियम जैसे का तैसा है-रत्ती भर भी नहीं बदला। मनुष्य पहाड़ों की कन्दराओं में जाकर अपने को छिपाए, चाहे अपने को सागर की तह में जा बिठाए और चाहे आकाश पर उड़ जाए-पर इस संसार भर के राज्य में कोई ऐसी जगह नहीं, जहाँ कर्म अपने परिणाम से पीछा छुड़ा सकें। इसीलिए विद्वानों ने कहा है कि जो मनुष्य औरों के साथ बुराई अथवा भलाई करता है, उनका परिणाम लौटकर उसी को प्रभावित करता है, जिससे सांसारिक दुःख या सुख पैदा होता है। और यदि भला काम फल की इच्छा से रहित हो, जिसमें मिलावट या बनावट का लगाव न हो तो वह (भलाई) कर्त्ता को मोक्ष की ओर ले जाता है। इसलिए धर्म की यह आज्ञा है कि बुरे कामों का त्याग ही करना चाहिए और नेक कार्य यदि फल को दृष्टि में रखकर किया जावे तो वह सांसारिक सुख देता है पर यदि भलाई फल की अनिच्छा से की जाए तो उसका फल 'मोक्ष' है। अब मनुष्य को अधिकार है कि जिधर को चाहे अपनी गति बढ़ाए-

शरअ[९] का फरमान[१०] है नेकी से सारे काम कर।
मत बदी कर भूल से मत किसी को बदनाम कर।।

अब आप शुभ कामों पर, जो सुख का कारण है, उन पर ध्यान दें। शुद्ध मति, सच्चा ज्ञान, सहनशीलता, होशियारी, सत्यता, पवित्रता, इन्द्रिय-दमन, मनोनिग्रह, सुख-दुःख की अधिकता में निर्लेपता, बुरे कामों से भय, सत्कर्मों में निडरता, दया, आराम, सन्तोष, भक्ति, दान, शुभकामना, नशे से परहेज आदि अच्छी आदतें प्रभु की ओर ले जाती हैं। जिन खूबियों से सबको लाभ और संसार में शान्ति स्थापित हो वही ईश्वर की आज्ञा है, उनका पालन करना मनुष्य का मुख्य कर्त्तव्य है और जिन मनुष्यों में ये गुण हों वे देवता कहलाते हैं। देवता का कोई विशेष प्रकार का शरीर नहीं होता-देवता तो गुणवान् को कहते हैं।

जिन बुरे कामों में मनुष्य स्वयं कष्ट उठाता है और औरों को कष्ट पहुँचाता है वे सब दुष्टों के प्रिय दुर्गुण हैं जो निम्नलिखित हैं- अज्ञान, बुराई करना, कुविचार, कुकर्म, बुरी नीयत, बुरे दृश्य देखना, दुष्कर्म करना, स्वार्थ, आत्मश्लाघा, भीरुता, सुस्ती, नुक्ताचीनी, व्यर्थ क्रोध, धर्मान्धता, घमण्ड, अयोग्य इच्छा, लोभ, तृष्णा, बेहूदा बोलना, अनम्रता, बुरा स्वभाव, बुरे संग में प्रीति, सन्मार्ग में रुकावट- कहाँ तक कहें, विद्याभ्यास से घृणा, अज्ञानता और दुष्कर्मों में प्रवृत्ति उसका आदर्श हो जाता है। शैतान कोई विशेष प्रकार का देहधारी नहीं। जिसमें ये बुराइयाँ हों, वही मनुष्य शैतान है।

इन दोषों में से बहुत-से एक जैसे और एक अर्थ रखने वाले जान पड़ते हैं, पर ऐसा नहीं हैं उनमें थोड़ा-थोड़ा भेद है। जैसे तृष्णा व लोभ दोनों समान दीखते हैं पर उनके अर्थ में थोड़ा भेद अवश्य है। ऐसा ही सब जगह जान लें। ये सब बुरी आदतें किसी मनुष्य में एक ही समय प्रकट नहीं होतीं- समय आने पर अपने बल को बढ़ाती हैं। एक के प्रकाश में दूसरी दब जाती हैं, उनके दबाव-घटाव को जानने वाले मनुष्य सद्गुणों को उभारकर बुरी आदतों से अपना पीछा छुड़ा लेता है। इस सत्य-मार्ग पर न चलकर मनुष्य दुःख उठाता और बदनाम हो जाता है।

उपासना कांड

मनुष्य बिना अहंकार के रहे। सत्कर्म के करने से मनुष्य को जो अभिमान-सा होता है, उसका नाम अहंकार है-संस्कृत भाषा में इसे अहंता (अहंभाव) अथवा 'मम-ता' कहा है। कोई भी सत्कर्म अहंकार के साथ मिलकर अपने असली स्वरूप में नहीं रहता, परन्तु वह किया हुआ कर्म न किये के तुल्य हो जाता है। विद्वानों ने इस दोष को दूर करने के लिए बहुत सुन्दर उपदेश दिये हैं। उनका वचन है कि यदि बाएँ हाथ से कोई शुभ काम किया जावे तो उसका ज्ञान दाएँ हाथ को भी न हो। यदि मस्तिष्क किसी के साथ भला करे तो मन इससे बेखबर रहे। ये वचन मनुष्य को इस बुरी आदत (अहंकार) को छुड़ाने के लिये काफी हैं। मनुष्य से यदि कोई अच्छा काम हो जाता है, तो वह अपनी प्रशंसा सुनने के लिए हर ओर कान लगाए रखता है। यदि कोई उसकी बड़ाई न करे तो फिर विवश होकर लोगों के सामने अपनी प्रशंसा स्वयं ही करने लग जाता है। यह एक ऐसा कड़ा बन्धन है, ऐसी कड़ी जंजीर है कि मनुष्य का इससे स्वतन्त्र होना बहुत कठिन है। अपनी प्रशंसा चाहना अपने आपमें एक बड़ा भारी पाप है। इसके प्रभाव से रसायन भी निष्फल हो जाता है।

बीज अपने को छिपाता है तो वृक्ष पैदा होता है और जो बीज बाहर पड़ा रहता है, वह बीज या तो पददलित हो जाता है, या उसे पशु-पक्षी खा जाते हैं। इसको संस्कृत भाषा में निष्काम कर्म कहा गया है। प्रभु-भक्तों के मत में इसे नाश होने वाला लिखा है। जैसे धान के ऊपर के छिलके को अलग कर देने से फिर वह खाने के काम तो आता है, परन्तु आगे उत्पत्ति करने योग्य नहीं रहता। सत्य कर्म के साथ प्रशंसा का लगा हुआ छिलका मनुष्य को संसार में बार-बार लाने का कारण बनता ही रहता है। इसे दूर कर देने से नाशवान् का नाश हो जाता है ओर शेष संसार में रह जाते हैं।

प्रभु भक्त इस बात को जानकर कर्म करते हैं और सत्य-पथ में जा लीन होते हैं, फिर साक्षात्कार में जाकर आराम पाते हैं। इसलिए अपनी प्रशंसा आप करना भारी भूल है। लिखा है-

तारीफ अपनी आप मत करना कभी तू भूलकर,
ऐब अपना देख, ऐबे गैर पर मत कर नजर।

जो मनुष्य इस बुरी आदत वाला है, वह अन्धेरे में है।

उच्च से उच्च मनुष्य भी अपनी प्रशंसा करने से छोटा और पवित्र होने पर भी खोटा हो जाता है। यह एक प्रकार का पाप है, जो मनुष्य में परदोष निकालने का स्वभाव बढ़ाता है और संसार में उसे नाकारा बनाता है। स्वार्थी पुरुष अच्छे मनुष्यों के संग से घबराता है और कोई विचारशील मनुष्य उसे समीप नहीं आने देता। स्वार्थ सत्य-पथ से हटाकर कुमार्ग पर चलाता है और फिर दु:ख को समीप लाता है। बुद्धिमान् मनुष्य वह है, जो अपने दुर्गुणों पर ध्यान रखे और दूसरे के दुर्गुणों की पड़ताल न करे।

स्वार्थ से काम सारे दुनिया में हैं बिगड़ जाते,
गुप्त कहाँ वह भेद जिसे सभा में हैं सुनाते।

स्वार्थ से सब काम बिगड़ जाते हैं। इससे चोट खाकर फिर वे बनने में नहीं आते। जैसे किसी भेद को जन-साधारण की सभा में सुनाकर यह बताना कि यह गुप्त भेद है, किसी से मत कहना, इस वचन से लोगों को हँसाना और अपने को मूर्ख बनाना है। जो मनुष्य स्वार्थी हो जाता है, वह स्वयं अपने आपको धोखा देता है और वह शुभ आचरण को बेचकर दुराचरण को मोल लेता है। यह स्वार्थ एक बला है जो शरारत को जगाती है, जो कभी दूर नहीं होती। स्वार्थ एक आत्मिक व्याधि है, जिसके साथ असत्य बोलना भी शामिल है। स्वार्थ को पूरा करने के लिए झूठ और धोखा देना भी उसका स्वभाव हो जाता है-

हुआ दिल जो आलूदा[११] हिरसो[१२] हवा से
नहीं चमकता फिर वह नूरेखुदा[१३] से।

प्रभु से मिलाप तो मनुष्य को प्राप्त ही है और यह सदा उसके समीप है। व्याप्य वस्तु व्यापक से भिन्न नहीं हो सकती। केन्द्र और घेरे का सम्बन्ध सदा से है। अनुचित सांसारिक विचार मनुष्य के चित्त को हर समय परेशान करके तृष्णा से उसकी पवित्रता को बिगाड़ देते हैं। इसलिए बुरे काम की जिम्मेदारी से बचने के लिए जीवन के कार्यक्रम को सत्य तथा उचित प्रकार से बनाना आवश्यक है। मन की शुद्धता के बिना जो पुरुष प्रभु के दर्शन की चेष्टा करता है वह भूल पर है। जब तक मन शुद्ध न हो प्रभु-प्राप्ति नहीं होती। फिर अन्त:करण प्रकाशित होकर प्रभुदर्शन से स्वयमेव आह्लादित हो जाता है। मन की शुद्धता के बिना प्रभु-प्राप्ति के लिए मनुष्य जिस प्रकार चेष्टा करता है, वह सब व्यर्थ हो जाती है।

अत: उपासना की विधि चित्त की चंचलता को दूर करके परमेश्वर प्राप्ति के योग्य बना देती है। यदि मनुष्य इस अवस्था को ठीक बना ले, तो ज्ञान-पथ की ओर उसका पग बढ़ सकता है, इसके बिना नहीं। इसलिए प्रभु-भक्तों का वचन है-

दिलबर[१४] तेरा तेरे आगे खड़ा है,
मगर नुक्स[१५] तेरी नजर[१६] में पड़ा है।

जिसकी खोज में लोग हैरान व परेशान हैं, वह तो सामने खड़ा है, परन्तु उसे इन बाहरी आंखों से देखना चाहते हैं। उनकी आँखों से जो वस्तुएँ दीखती हैं, वे सब महसूस की जाती हैं, परन्तु परमात्मा अंगों से परे है। इसलिए वह किसी भी अंग से मालूम नहीं हो सकता। ठीक मस्तिष्क का दूसरा नाम 'ज्ञान' है। प्रभु-भक्त अपने-अपने अनुभव से उसे देख सकते हैं। परन्तु उसे संसार के झूठे प्रेम ने बुरा बना दिया है। जब तक यह बुराई दूर न की जाये, तब तक उसका दर्शन कठिन है। जैसे आँख से सुनने का, कान से देखने का कार्य कठिन है। इसलिए प्रभु-भक्त मन की शुद्धि के लिए ठीक यत्न करता है। उन ही पुस्तकों का पठन-पाठन करता है जिसमें यह विषय हो। उन मनुष्यों की संगति में जाना पसन्द करता है, जो उसमें दक्ष हैं। संसार का कोई भी ऐसा कार्य जो इस मार्ग में रुकावट डाले, वह नहीं करता है। यह वह उपाय है जिससे लोक और परलोक दोनों सुधर जाते हैं।

जब शत सहस्त्र इच्छाओं से सब हृदय कलुषित होवे,
फिर कहाँ प्रभु की ज्योति से अन्तर आलोकित होवे?

इच्छाओं का बढ़ते जाना हृदय में एकाग्रता उत्पन्न नहीं होने देता। अभिलाषा हृदयरूपी सागर में एक लहर-सी उठाती है, फिर उससे दूसरी-तीसरी लहर स्वयमेव बनती जाती है। इस अवस्था में हृदय में मैल बढ़ता जाता है। यह बार-बार जीवन और मृत्यु की आफत को साथ लाता है। इससे पीछा छुड़ाना ही मानव-जीवन का लक्ष्य है, परन्तु हर एक विचार की यहाँ पहुँच नहीं। अनुचित इच्छा से हृदय की शुद्धता नहीं, दोष-युक्त स्वभाव को दूर करने वाली पुण्य कमाई नहीं, परन्तु जो ईश्वर के प्रेमी हैं, जो इस गूढ़ विषय को हल करने के योग्य हैं, वे सदा कम

होते हैं। हर कोई इस पथ का पथिक नहीं। जिसके पूर्व शुभ कर्म सहायक हों, वर्तमान का पुरुषार्थ ठीक प्रकार से हो और प्रभु की कृपा-सहायता हो, वह इस मार्ग पर चल सकता है और वह निश्चय ही भाग्यवान् है, जिसे योग्य पथ-प्रदर्शक मिले, परन्तु आजकल योगियों की, गुरुओं की और गुरु-मन्त्रों की बड़ी ही चर्चा हो रही है, इसके पीछे संसार की एक भारी संख्या अपनी सुध-बुध खो रही है। बड़ी विचित्र बात है कि जो चीज हर अवस्था में कम होनी चाहिए, जिसकी कमी ही सुन्दरता की द्योतक है, जिसकी अधिकता से प्रकृति भी डरती है, मनुष्य अपनी अधूरी चेष्टा से यदि इसी ओर प्रयत्नशील हो तो सिवा बुरे परिणाम के और क्या हो सकता है? प्रत्येक सम्प्रदायवालों ने अपने शिष्यवर्ग को बढ़ाना और उन्हें अपने सिद्धान्त का अन्धविश्वासी बनाना ही अपना विशेष कर्त्तव्य जान लिया है। भारतवर्ष इस बात का दीवाना है। इसीलिए तो इसे न कोई खड़े होने का स्थान है और न कोई ठहरने का ठिकाना। कितनी भूल है, कितना अन्धविश्वास है कि गुरु को परमेश्वर से ऊँचा स्थान दिया जाए। इससे प्रकट है कि यह देश सत्य-मार्ग पर आरूढ़ नहीं। ऐसी अनुचित चेष्टा तो हृदय की शुद्धता प्रकट नहीं करती, परन्तु भूल को जताती है। विद्वानों का तो कथन है-

जिन्दगी को रास्ती[१७] से तू गुजार,
कर्म फल से फिर रहेगा सुबकसार[१८]।

मनुष्य को चाहिए कि वह अपने जीवन को सत्य-मार्ग पर ही चलकर व्यतीत करे और बनी हुई बात को अपने हाथ से न बिगाड़े। यह नियम कर्म के फल से मुक्त होने का है। मनुष्य बुरे कार्य के बोझ से हल्का हो जाता है। अन्तःकरण की प्रवृत्ति विश्वप्रेम में झुक जाती है। फिर सत्कर्मों से मेल व दुष्कर्मों से वैर हो जाता है। सुख में उसी प्रभु का धन्यवाद और दुःख में शान्ति अनुभव करने का स्वभाव हो जाता है। फिर जीवन में न तो अधिक सुख और न मृत्यु से अधिक घबराहट होती है। हर एक को सुखी देखकर खुश होना और दुःख में हाथ बँटाना उसका स्वभाव हो जाता है। इन नियमों का पालन करने से मनुष्य में मनुष्यता आ जाती है। यदि ऐसा न हो तो लोभ-लालच आदि के प्रभाव से हृदय घबराता है। मनुष्य को सांसारिक कारोबार में सच्चा रहना चाहिए और कभी भी मुख से झूठ या कटु वचन न कहना चाहिए। व्यवहार और व्यापार में नेकी से काम करना और धोखा-देही से डरना चाहिए। इससे मान-मर्यादा और शुभ कमाई प्राप्त होती है।

निश्चय से और विचारशील की संगति से आत्मा अमर हो जाता है। यह विचार बहुत अच्छा है, जिसके अनुसार निश्चय करने से परमात्मा का मिलाप होता है। कामवासना की अधिकता से डरना, गृहस्थ के नियमों को भली प्रकार से पालना, लोभ और इच्छाओं से पराजित न होकर इस पर विजय पाना, यह मनुष्य का कर्त्तव्य है। इस कर्त्तव्य को पूरा करते रहना मनुष्य को बुद्धिमान् बनाता और उसे कभी भी बेचैनी में नहीं ले जाता। इस प्रकार से जीवन बिताना ठीक है। जो इस पर आचरण करता है, वही पूरा मनुष्य है। जो इन नियमों का पालन नहीं करता, वह चाहे किसी का गुरु हो या शिष्य, वह गद्दार है। जाँच करने से यह प्रमाणित हो चुका है कि जब तक मन अनुचित इच्छाओं से बरी न हो, तब तक भलाई की लता कैसे हरी हो? वह मनुष्य इस पथ में कैसे गति करेगा, जिसके नेत्रों में मनुष्य- पूजा की धूल पड़ी हो? मनुष्य को परमेश्वर से अधिक मानना भलाई को बेचकर बुराई को मोल लेना है। जो ऐसा करते हैं वे सच्चाई से घबराते हैं और झूठ के समीप होते जाते हैं। गुरु तो अपनी चतुरता से माल उड़ाने लगे और शिष्यजन धोखे में आने लगे। कैसी बात है जिसका न मोल है और न पता है, केवल वहम-परस्ती है, जिससे मनुष्य-समाज पर बड़ा ही आघात है। हाँ, यह सत्य है, इस काम को वही कर सकता है जो संसार को पढ़ाने और दुनिया से कमाने की अक्ल रखता हो। हर एक इस विद्या का प्रवीण नहीं। इस मनुष्य-पूजा से तो यह प्रकट है-

भूलकर हमने खुदा को कैसा अन्धा कर दिया,
अपने घर के बीच में ही आपको गुम कर दिया।

मेरे मित्र! मनुष्य-पूजा प्रभु-पूजा के उच्च नियम को मनुष्य के दिलों से दूर हटाकर उन्हें कंगाल बना देती है। यह ऐसी भूल है जैसे जिह्वा और कान रखने वाला खुद को गूंगा और बहरा बना दे या अपने ही घर में घर का स्वामी गुम हो जाए। ऐसी बातों का बनाना केवल अपनी भूल पर

लोगों को हँसाना है। जो जिसके योग्य हो उसे वैसा समझना, जिसकी मनोवृत्ति संसार के उपकार में हो, उसका मान करना उसके उपकार को न भूलना भला ही है। मगर उसे भूल जाना चाहिए। यह जो कुछ कहा गया है, उपासना की सीढ़ी के विपरीत होने से कहा गया है। यह तो मनुष्य के स्वभाव को शुभ बनाकर परमात्मा की ओर, जो सब भलाइयों का केन्द्र है, ले जाता है। इसके बिना प्राप्त किए साक्षात्कार की सीढ़ी किसी को नहीं मिलती। उपासना की रीति बुरे रास्ते पर चलने वाले भूले दिल को, जो इसका शत्रु और बुराई चाहने वाला है, से बचाती है। इसके सहारे ही अगर मनुष्य में बनावट का स्वभाव न हो, दिल पर काबू हो जाता है। इसके इशारे पर दुनिया के सब विद्वान् सहमत हैं। यही एक बात है जिस पर चलने से मनुष्य संसार के बन्धन से मुक्त होकर मुक्ति को प्राप्त करके सदा के लिए प्रसन्नचित हो जाता है। इस काम के करने वाले को इस नियम पर कटिबद्ध होना चाहिए। जिससे आगे-आत्मा की शक्ति बढ़ती जाये और सांसारिक मोह के जंजाल से कमजोरी सामने न आये वह यह है-

आँख कान मुँह बन्द कर नाम निरंजन ले,
अन्दर के पट तब खुलें, बाहर के पट दे।

देखने के योग्य वस्तु को देखना और न देखने के योग्य को न देखना, आँख को बन्द करना है। सुनने के योग्य शब्दों को सुनना और न सुनने के योग्य शब्दों को न सुनना, कान को बन्द करना है। फिजूल बातों से जिह्वा को रोकना और शुभ और हित की बातों का करना जिह्वा को बन्द करना है। इस अमल के दृढ़ हो जाने से प्रभु की शर्त है कि अगर आत्म-साक्षात्कार और प्रभु-दर्शन न हो तो मुझे झूठा समझो, मेरा उपहास करो। यह अमल बार-बार परमात्मा के गुणों के प्रकट होने में, उसके प्यार में सहायक है। मगर आजकल इस पर अमल गलत तरीके से हो रहा है। घंटा दो घंटा के लिए आँख, कान, मुख को बन्द करना ही शुभ काम मान लिया गया है। यह किसी सीमा तक साधन के रूप में ठीक हो सकता है, अगर इससे ठीक रास्ता खुल जाये, मगर यह नहीं होता। असली नियम जिसमें भूल नहीं है, वह ऊपर लिखा गया है कि आँख, कान और जिह्वा का ठीक रास्ते में जाना सिद्धि का कारण हो सकता है। इसके बिना दूसरा कोई उपाय नहीं। अंगों द्वारा बाहरी धूल जो दुनियावी असर लेकर अन्तःकरण में जमा होती है, वही उसके जीवन को बर्बाद करने में बल पकड़ लेती है। इन इन्द्रियों और संस्कारों के दोष से दूषित होकर मनुष्य जानता हुआ न जानने और सुनता हुआ न सुनने वालों के बराबर होता है। दुनिया में देखा जाता है सही है, गलत नहीं हो सकता है। दिखावटी अमल करने वाले जो भीतरी शक्ति को नहीं संभालते, उनका स्वभाव ज्यादातर कठोर देखा गया है, और बाहरी आडम्बर में फँसकर कुछ अभिमान और कुछ अपने बड़प्पन की स्तुति सदा ही करते रहते हैं, इसलिये सारी बनावट मतलब निकालने के लिए प्रमाणित होती है और जो भले लोग ठीक रास्ते पर चल रहे हैं, वे किधर से आते हैं और कहाँ को जाते हैं। कुछ पता नहीं चलता। वे संसार को कहाँ बढ़ाते हैं। फर्क है दुनिया के चाहने वालों का इस रास्ते में कदम नहीं बढ़ाना है और अगर दिखावट के लिए चले तो कदम-कदम पर गिर पड़ता है, इसलिए उपासना मनुष्य के अन्दर की सफाई को ठीक करके असली जगह तक पहुँचाती और परमात्मा से मिलाती है।

ज्ञान कांड

ज्ञान यह कहता है कि मनुष्य को अपने आपको नाश कर देना चाहिए। यह एक ऐसा शब्द है कि जिसे सुनने से मनुष्य घबरा जाता है और कुछ समझ न आने से मुरझा जाता है। फिर कुछ करते बन नहीं पड़ता। न चलने की ताकत और न रहने की जगह का दृष्टान्त सामने आता है, परन्तु ऐसा नहीं। यह प्रभु-भक्तों का केवल एक इशारा है। इसे ही गीता में कर्म-संन्यास या अकर्म के नाम से कहा है। यह एक ऐसा अद्भुत तरीका है कि मनुष्य कर्म तो करता है, परन्तु उसके बन्धन में नहीं आता। कर्म होना और कर्म करने वाले का उसके परिणाम से मुक्त रहना, यह कितनी बुद्धिमत्ता का काम है। यह मनुष्य की विचारधारा के बहाव में कितनी तेजी है। हर एक मनुष्य इस भेद से परिचित नहीं हो सकता। अज्ञान के अन्धकार को अपने हृदय से नहीं धो सकता। यह प्रभु-भक्तों का एक भेद है। दुनिया का सुख उसके दिल में नहीं समाता।

जो प्रभु-प्रेमी है, संसार उसे पागल कहता है, परन्तु

उसका मन हर समय एकाग्र रहता है। संसारवालों की दृष्टि में वह नष्ट हो चुका है, परन्तु वास्तव में वह सबसे सुखी है। न किसी की कुछ सुनता है और न किसी को कुछ कहता है, वह सदा अपनी उधेड़-बुन में लगा रहता है। उसके आगे मुक्ति खड़ी हँसती है। वह कभी रोता और कभी हँसता और कभी विनय करता है। ज्ञान नहीं कि वह इस स्थिति में किसको याद करता है। जब मनुष्य अपने सच्चे उद्देश्य की ओर जाता है तो इसके बदले में फल भी पाता है। जो मनुष्य अपने व्यक्तित्व को मिटाता है वह उसके बदले में अमर हो जाता है। सबके ऐसे भाग्य कहाँ, जो इस अवस्था को प्राप्त हों, हर एक के ऐसे भाग्य कहाँ जो इस मार्ग में जायें। अपने आपको मिटाना यह हर एक के बस की बात नहीं। इससे मनुष्य की सुध-बुध बिगड़ती और हर एक प्रकार के विचार बिखरते हैं। जो इसके शौकीन हैं वे ही संसार के झगड़े मिटाने योग्य हैं। उन्हें न बुद्धि है और न इच्छा है कि संसार को रिझावें। उनका पवित्र मन नहीं सोचता कि किसी को अपने जाल में फँसावें। उनका मन पवित्र है। उनके सामने केवल संसार के रचने वाले का चित्र है। केवल इसी से लगाव है। न किसी से धोखा है और न किसी से दगा। वह न किसी के आगे हाथ फैलाते और न घर-घर जाकर ठोकरें खाते हैं। संसारवालों का जिस वस्तु से प्रेम है उनकी दृष्टि में वह मिट्टी के समान है। संसारवाले संसार को मर कर छोड़ते हैं, परन्तु ये जीते जी ही इस संसार को मिथ्या जानकर अपना सम्बन्ध तोड़ लेते हैं। सच है, जिनके हृदय से अज्ञान का अन्धकार दूर हो जाता है, वे इस व्यवस्था में जाने के लिए विवश हो जाते हैं। किसी विद्वान् ने कहा है-

जो कोई बेनिशाँ के पीछे जावे।
करे गुम आपको तब उसको पावे।।

निशान के साथ बेनिशान की तलाश नहीं होती। जिसके कर्म खोटे हैं, वह संसार में किस प्रकार सुखी रहेगा? ऐसे मनुष्य से संसार को कोई लाभ नहीं, जिसके विचार खोटे हैं। खोये को पाने के लिए अपने आपको खोना होता है। वही उसे प्राप्त कर सकता है, जो उसकी जुदाई में हर समय तड़पता है। न सोता है और न जागता है। इस स्थान पर पहुँचकर मनुष्य की दृष्टि में हर वस्तु एक-सी हो जाती है। हर मनुष्य एक-सा है। कोई राजा हो या रंक। वह ऐसी बुद्धि के प्रभाव में नहीं आता, जो एक को दूसरे से पृथक् करती हो। जब अन्धकार का पर्दा उठ जाए, तब वह सांसारिक वस्तुओं से कैसे प्रेम बढ़ावे? वह इस शरीर को नाशवान् समझता है और अधिक देर तक संसार में रहने से दु:ख मानता है। जैसे-

है रुकावट तू ही उसके दरमियां।
वरना वह जाहिर यहाँ और है वहाँ।।

ठीक है, जब प्रेमी समीप होता है, तब फिर उसकी जुदाई बहुत ही दु:खदायी हो जाती है। उस समय जो वस्तु रास्ते में हो, वह रुकावट डालती है। इससे व्याकुलता बढ़ जाती है। जब तक वह रुकावट दूर न हो जाये, प्रेम मुख से परदा न उठा दे, मन में शान्ति नहीं आती।

यह नियम साधारण बातों में कार्य करता हुआ दिखाई देता है। विद्यार्थी पाठशाला और कॉलेज में विद्या पढ़ते हैं। परीक्षा का समय जितना समीप आता-जाता है, उतना ही उनके मन का लगाव उधर बढ़ता जाता है। वह प्रत्येक कार्य से पृथक् होकर केवल उसी की रचना में मगन रहते हैं। किसी उत्सव या प्रदर्शनी में जो तीन-चार मील की दूरी पर हो रही है, लोग देखने के लिए जाते हैं। जितना उसके समीप होते जाते हैं, उतना ही उनकी चाल तेज होती जाती है और जब वह दृश्य सामने आ जाता है तो उस थोड़े से मार्ग को दौड़कर समाप्त करते हैं। बस, जितना किसी के साथ प्रेम होगा, उतना ही यह नियम उस पर लागू होगा।

प्रभु-भक्त ने अपने स्वभाव को सांसारिक प्रेम से हटा लिया और इस संसार को नाशवान् जानकर इससे न्यारा हो गया। मन की शुद्धि ने उसे मार्ग दिखाया, घर-घर में भटकना छोड़कर केवल एक सच्चे प्रभु से भिक्षा की याचना की। पूर्व संचित कर्मों ने भला किया, एकान्त ने खुशी को जगा दिया। महात्माओं के सत्संग और अच्छी संगति ने ज्ञान-प्रकाश को जगा दिया। कहाँ तक कहें, सब झगड़ों को मिटा दिया। प्रारब्ध से मिला हुआ यह मनुष्य चोला केवल परदे का काम कर रहा है और उधर प्रभु-भक्त उस परमपिता परमात्मा की जुदाई में जीते जी मर रहा है। इसलिए वह मृत्यु से नहीं घबराता। वह उसे उपकारी जानकर भय नहीं

खाता। उसे मृत्यु से भय नहीं। इस शरीर के जाने में प्रेमी का साक्षात्कार है। प्रभु-भक्त मृत्यु का सत्कार करता है। इसका स्वागत करने के लिए चाव से आगे बढ़ता है कि आकर इस चोले के परदे को हटा दे, मुझको स्वतन्त्र कर दे। सांसारिक मनुष्यों के पास तेरा जाना उनके लिए अन्याय है और मेरे पास आना तेरी कृपा है। ओ प्रसन्न करने वाली आ! मेरे पास आ! इसलिए सच कहा है-परमात्मा हर स्थान के अन्दर, यहाँ-वहाँ हर स्थान पर, हर रंग में प्रकाशमान है, परन्तु यह शरीर राह में रुकावट है। यही कारण है कि संन्यासी मृत्यु से नहीं घबराता। मनु जी महाराज ने ऐसा कहा है कि संन्यासी मृत्यु की इस प्रकार प्रतीक्षा करे जैसे कोई मजदूर (बेगारी) अपने सिर से बोझ को (अपने स्थान पर जाकर) लापरवाही से फेंक देता है और फिर बोझ के भार से सदा के लिए मुक्त हो जाता है। यह सच्चाई है-

नजदीक से नजदीक है और दूर से है दूरतर,
चश्मे दिल को खोलकर देखो वह आता है नजर।

परमात्मा सबका अन्तरात्मा, समीप से समीप और दूर से दूर है। कैसी बात है जो समझ में नहीं आती। यहाँ तो बुद्धिमानों की बुद्धि भी मात खाती और आगे जाने से घबराती है। ऐसी वस्तु के लिए जिसमें हठ पाया जाये, प्रयत्न करना निष्फल है, क्योंकि यह विचार ही विचार है। क्या कभी किसी का इससे मिलाप भी होता है? इस प्रश्न को सुलझाना कठिन है। ऐसा नहीं बाहरी कानों से सुना और बाहरी आँखों से वह देखा नहीं जाता, परन्तु मन के चक्षु से देखा जाता है। इसलिए आँखों से दूर और अन्दर की आँखों के समीप हो जाता है और देखने में नहीं आता। यह कहा गया है कि परमेश्वर में जगह या समय का भेद नहीं है। कारण यह है कि व्यापक वस्तु समय या स्थान की कैद में नहीं आ सकती। व्याप्य व्यापक से कभी भी जुदा नहीं हो सकता। ऐसी अवस्था में फिर वह नजर क्यों नहीं आता? इसका कारण विचार-भेद है। समय और स्थान का प्रभाव सांसारिक वस्तुओं पर तो हो सकता है, परन्तु उस अविनाशी परमपिता परमात्मा पर इन चीजों का अधिकार नहीं। वह हर समय और हर स्थान पर मौजूद है, परन्तु भेद तो विचारों का है। जब तक विचार पवित्र और उच्च न हों, तब तक प्रभु से मिलाप असम्भव है। अत: यह मनुष्य की योग्यता पर निर्भर है कि वह विचारों को उच्च बनाए।

लोगों को परमात्मा को जानने में इस बात की बड़ी रुकावट है कि वे पहिले अपने आपको नहीं पहचानते हैं। जिस मनुष्य को अपने आपका होश नहीं, वह परमात्मा को कब पा सकता है? जो स्वयं मार्ग भूला हुआ है, वह दूसरे को कब मार्ग दिखा सकता है? कुछ ऐसी भूल हुई पड़ी है कि जो डाकू की तरह मार्ग को रोककर खड़ी हुई है। आत्मा पास है, परन्तु हम इसे दूर समझ रहे हैं। जैसे मनुष्य इस शरीर के चोले में प्रकाश से अपरिचित हो शरीर के किसी भाग को अपना मान ले। जब ड्राइवर को अपना ही होश न हो, तो गाड़ी को भली प्रकार नहीं चला सकता। यह सत्य है कि जिसे अपना ही ज्ञान न हो वह परमात्मा को कैसे पहचान सकता है। आत्मा के ज्ञान के बाद परमेश्वर के जानने के लिए और कोई यत्न नहीं करना पड़ता-यह सिद्धान्त ठीक है। जो ज्ञान इसके दोष को दूर कर देता है, वह तत्काल ही परमात्मा के प्रकाश से इसे भरपूर कर देता है-जो अज्ञान अपने स्वरूप में बैठा हुआ है पहले उसे दूर करने का यत्न करना चाहिए। यह प्रभु-भक्तों का कहना ठीक है-

जो नाश से पहले नष्ट हुआ,
वह 'शेष' में मिलकर शेष हुआ।

यह कैसा वार्त्तालाप है, आनन्द का सच्चा मित्र है। कहने और सुनने में प्रेम का प्रकाश हो जाता है। अपने व्यक्तित्व का, जिसका कभी पतन नहीं होता, विकास होता है।

कैसा आश्चर्य है, जिसके जान लेने से संसार की हर एक चाल मात है, यह कैसा ऊंचा स्थान है, जिसका न कोई मकान और न निशान है। यह एक ऐसी आनन्दमग्न अवस्था है, जहाँ न कोई दु:ख और न कोई गिरावट है। संसार वाले ऐसी बातें सुनकर ही सांसारिक व्यवहार करते हैं, परन्तु इस पर आचरण करते हटते हैं। आजकल ऐसी बातों का मान है। उसकी दुकान खूब चल रही है जो चालाक है, परन्तु वह चालाकी व्यर्थ है, जिसमें अन्त में दु:ख है।

इसलिए हे मित्र! यह अवसर बहुत अच्छा है। जरा सावधान होकर खड़ा हो जा। बल और सच्चाई से, पूरे

प्रयत्न से प्रतिबिम्ब के पीछे मत घूम, परन्तु असली वस्तु को ढूँढ। फिर झूम-झूम कर मचा दे धूम। इसलिए यह कहना सच है कि फूल बन, काँटा न बन। मित्र बन, शत्रु न बन। जिसने मृत्यु से पहले अपने को नष्ट कर दिया है, उसे फिर कहीं भी कष्ट, दुःख अथवा शोक नहीं होता। वह नाशवान् को नष्ट करके 'शेष' हो गया है।

कर्म और फल के चक्र को तभी रोका जा सकता है, जब मनुष्य कर्म करे, परन्तु अपने आपको मध्य से हटा दे। अपने सत्कर्म और दूसरों के कुकर्म भूल जावे। यह कार्य कहने में तो सुगम पर आचरण करने में अति कठिन है, परन्तु इसके लिए भी एक उपाय है। यदि मनुष्य को लगन है तो आज नहीं तो कल प्राप्ति होगी ही। कारण यह है कि केवल भ्रम से निर्लज्ज हो रहा है। भ्रम के दूर होते ही सदा के लिए उससे निर्लज्जता दूर हो जाती है, इसलिए भ्रम का होना न होने के बराबर है-

प्रभु सबमें सभी कुछ है प्रभु में।

मनुष्य में दोष है जो मिलाप नहीं होने देता। परमात्मा के प्रेम से, सत्संग से, उदारता से जब दोष दूर कर दिया जाता है तब वियोग स्वयमेव दूर हो जाता है और हृदय में पवित्रता आती है।

हृदय आनन्द में डूबकर साक्षात्कार की मंजिल की ओर जाने को प्रेरित करता है। फिर तबियत पीछे की ओर नहीं हटती। यह अवस्था सबको प्राप्त नहीं होती। जब जन्म-जन्मातर का क्रम समाप्त हो जाए तब अंतिम जीवन में मनुष्य को यह ध्यान आता है! फिर-

हो गया आनन्द, दुनिया को रिझाकर क्या करूँ?
दिल प्रकाशित हो तो दीपक राग गाकर क्या करूँ?
जल गया अज्ञान का वह जाल अग्नि-दान से।
खुद बुझी जाती है अब उसको बुझाकर क्या करूँ?

यह सब निश्चित ज्ञान से कहा गया है। साक्षात्कार में और ही गुल खिलता है।

टिप्पणियाँ- १. अलगाव २. ओर ३. सांसारिक ब.तें ४. लगाव ५. प्रभु से प्रेम ६. असूल धर्म का नियम अथवा सिद्धान्त ७. पवित्र हृदयवाला ८. बुरे काम ९. नियम, धर्म १०. आज्ञा ११. भरा हुआ १२. तृष्णा १३. प्रभु की ज्योति १४. प्रियतम १५. दोष १७. दृष्टि १७. सत्यता १८. बरी, मुक्त।

यदि जान भी जाए तो क्या?

कुँवर सुखलाल 'आर्यमुसाफ़िर'

जब खजाना लुट गया,
फिर होश में आए तो क्या?
वक्त खोकर दस्ते हसरत
मल के पछताए तो क्या?

कुछ अमीरों व रईसों ने
समझ रखा है यह,
हम रहें जिन्दा, बला से
कौम मिट जाए तो क्या?

चूमती हैं पाँव जिनके,
कुल जहाँ की नेमतें,
उनकी नजरों में कोई,
फाकों से मर जाए तो क्या?

लीडरों को लीडरी की,
फिक्र दामनगीर है
ठोकरें खाती फिरें
ऋषियों की सन्तानें तो क्या?

जिनको अपने और पराये,
की, न थोड़ी भी तमीज़,
उनको ईसाई मुसलमां,
कोई बन जाए तो क्या?

काश! हर हिन्दू 'मुसाफ़िर'
की, तरह यह सोच ले,
धर्म के उत्थान में,
यदि जान भी जाए तो क्या?

जैसे पवन सब को सुख देता हुआ सब के रहने का स्थान हो रहा है वैसे ही विद्वान् को होना चाहिये।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ५.४१

युग प्रवर्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती जी

उम्मेद सिंह विशारद

ईश्वर की इस विशाल सृष्टि में मानव अपने ज्ञान के अनुसार विचार व्यक्त करने में स्वतन्त्र है और यह स्वाभाविक वैज्ञानिक व्यवस्था है कि मानव-समाज के विचारों व कार्यकलापों के शब्द आकाश में स्थिर हो जाते हैं। चाहे वह विचार, ईश्वर के प्रति हों, चाहे सत्य-असत्य, धर्म-अधर्म, ज्ञान-अज्ञान के प्रति हों और मानव-समाज अपने संस्कारों द्वारा जिन शुभ व अशुभ विचारों पर चलता है, उनमें आकाशीय शब्द अपना स्थान ग्रहण कर लेते हैं। यह शृंखला प्रत्येक युग को प्रभावित करती है। विचारों की सार्थकता अपना प्रभाव समाज के चलन पर डाल कर युग का निर्माण कर देती है। महाभारत काल के बाद आज तक जिन-जिन विचारों के युग से गुजरना पड़ा उन पर संक्षिप्त व्यक्तिगत प्रकाश डालते हैं।

भारत का-अन्धकार युग- अंग्रेजों तथा मुसलमानों के भारत में आकर शासन करने से पहले और महाभारत काल के बाद भारत की बड़ी दयनीय स्थिति थी। भारतवर्ष में मत-मतान्तरों की बाढ़ आ गयी थी, नारी और शूद्रों को पढ़ने का अधिकार नहीं था, सामन्तशाहियों द्वारा गरीब असहाय जनता का शोषण चरम पर था। ईश्वर की जगह काल्पनिक देवी-देवताओं की पूजा होने लगी थी, पत्थरों की मूर्तियाँ बनाकर धर्म का व्यापार चल पड़ा था, जाति-पाँति, छुआ-छूत का प्रबल समर्थन था, वेदों के मन्त्रों के रूढ़ि अर्थ करके जनता को बहकाया जा रहा था। चारों ओर अनीति व असत्य का बोलबाला था। अखण्ड राष्ट्रभक्ति के बजाय छोटे-छोटे राज्यों का चलन होकर अपनी-अपनी चला रहे थे तथा अन्य अनेक कारण थे।

इस अन्धकार का लाभ मुसलमानों ने उठाया, क्योंकि देश रूढ़ियों का शिकार हो चला था, जो कुछ रहा सहा था उसे इस्लामी शिक्षा ने उखाड़ दिया था। मुसलमानों का शासन इस देश में ८०० साल तक रहा। यद्यपि राणा प्रताप तथा शिवाजी आदि ने भारत की प्राचीन परम्परा की रक्षा करने का प्रयत्न किया, तथापि मुस्लिम शासन हावी रहा। मुस्लिम शासन का युग भारत में अन्धकार युग रहा। इस युग में हम अपना सब कुछ भुलाने लगे और परवशता के कारण रूढ़ियों के दास हो गये। तलवार के बल पर धर्म-परिवर्तन होने लगा मुसलमानों ने हिन्दुओं क़ी बहू-बेटियों पर भी अत्याचार किये। हिन्दुओं के मन्दिरों को तोड़ा जाने लगा, मन्दिरों को मस्जिदों का रूप दिया जाने लगा। सारे हिन्दू समाज के वैदिक संस्कार व सभ्यता के संस्कार टूट गये थे। चारों ओर हिन्दुओं का कत्ले-आम होने लगा, जनेऊ उतरवाये जाने लगे। इस प्रकार भारत की जनता पर अपनों द्वारा व मुसलमानों द्वारा भीषण अत्याचार होने लगे। इसलिये उस युग को हम महान् अन्धकार युग कह सकते हैं।

भारत का सुधार व जागरण युग, महर्षि दयानन्द व अन्य सुधारक- मुस्लिम शासन के बाद अंग्रेजों का शासन आया। अंग्रेजों का शासन लगभग २०० वर्षों तक रहा। वे लोग व्यापारी बनकर आये थे, यहाँ की अन्ध परिस्थितियों से शासन-सूत्र उनके हाथ आ गया और व्यापारी राजा बन गये। मैकॉले ने भारत की प्राचीन शिक्षा-पद्धति को बदलकर अंग्रेजी शासन को और भी पक्का कर दिया। व्यक्ति की स्वतन्त्रता के विचार पढ़े-लिखे लोगों में फैलने लगे थे, अंग्रेजी ग्रन्थों को पढ़कर भारतीयों को उनका परिचय होने लगा। अंग्रेज ऐसे व्यक्ति उत्पन्न करना चाहते थे जो शक्ल सूरत से तो भारतीय हों, परन्तु विचारों में अंग्रेज हों और पढ़े-लिखे लोग यूरोप की सुधार-क्रान्ति से परिचित हो गये, उनके हृदय में भारतीय रूढ़ियों को उखाड़ने की लालसा जग गई। इस सुधार युग को लाने में महर्षि दयानन्द सरस्वती जी, राजाराम मोहन राय जी, ईश्वरचन्द विद्यासागर जी, केशवचन्द्र सेन जी आदि ने कार्य किया। इनमें राममोहन राय व केशवचन्द्र सेन अंग्रेजों के विशेष कृपापात्र रहे।

१. राजाराममोहन राय १७७२-१८३३-६१ वर्ष तक जीवित रहे, उन्होंने सामाजिक चेतना जाग्रत की।

२. ईश्वरचन्द्र विद्यासागर १८२०-१८९१-७१ वर्ष तक जीवित रहे। इनका सुधार क्षेत्र विधवाओं की दुर्गति को दूर

करना था।

३. केशवचन्द्र सेन १८३६-१८८४ ये ४८ वर्ष तक जीवित रहे, ये सामाजिक जागृति के प्रतिनिधि थे, ये समाज के सब प्रकार के प्रतिबन्धों को तोड़ डालना चाहते थे।

४. महर्षि दयानन्द सरस्वती जी १८२४-१८८३-५९ वर्ष की आयु तक जीवित रहे। आप समाज में व्याप्त सम्पूर्ण अन्धविश्वासों व सामाजिक कुरीतियों को एक सिरे से चुनौती के रूप में स्वीकार कर रणक्षेत्र में कूद पड़े। इन्होंने स्वतन्त्रता- संग्राम का सूत्रपात किया। सर्वप्रथम वेदों के रूढ़ि अर्थों पर प्रहार किया, उनका कहना था कि पंडित लोग वेदों के मन्त्रों का ऐतिहासिक व रूढ़ि अर्थ करते हैं। रूढ़िवाद के वे प्रबल विरोधी थे। उन्होंने तत्कालीन विद्वान् सायणाचार्य, मैक्समूलर, महीधर आदि के असत्य अर्थों के स्थान पर ईश्वरपरक अर्थ किये। उन्होंने सिद्ध किया कि वेदों में नारी और शूद्रों को पढ़ने का अधिकार है, उन्होंने कहा, वेदों में जाति जन्म से नहीं वर्ण से निर्धारित है। छुआ-छूत आडम्बर है, मृतक-भोज, देवी-देवताओं के नाम पर निरोह पशुओं की हत्या भयंकर पाप है। यज्ञ करने का सबको अधिकार है तथा जनेऊ भी वे सभी पहन सकते हैं जो उसका पालन कर सकता है, वेदों में मूर्ति-पूजा नहीं है। ईश्वर निराकार है, सर्वव्यापक है। इस प्रकार उनके काल में जितने भी समाज-सुधारक हुए उन्होंने एक विषय में क्रान्ति की किन्तु महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने तमाम सामाजिक कुरीतियों, धार्मिक अन्धविश्वासों व रूढ़ि-परम्पराओं के विरोध में आवाज उठाई और सत्यार्थ प्रकाश ग्रन्थ लिखकर तथा आर्यसमाज स्थापित कर सदैव के लिये एक प्रकाश-पुंज बनाकर चल दिये।

भारत का स्वतन्त्रता युग- महर्षि दयानन्द सरस्वती जी स्वतन्त्रता आन्दोलन के सूत्रधार थे, उन्होंने सामाजिक चेतना जगाने के साथ-साथ राष्ट्रीय चेतना भी जगानी शुरू की थी, इसलिए अपने ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश में उन्होंने 'स्वराज्य सर्वोत्तम होता है' निर्भीकता से उल्लेख किया था। १८५७ से लेकर १९४७ तक स्वतन्त्रता आन्दोलन में लाखों देशभक्त शहीद हुए थे, उन सब पर महर्षि दयानन्द जी एवं आर्यसमाज का अत्यधिक प्रभाव पड़ा था। व्यक्ति की दासता से मुक्ति की जो प्रक्रिया भारत में प्रारम्भ हुई थी उसका अन्त १९४७ में हुआ जब भारत स्वतन्त्र राष्ट्र घोषित किया गया। इसमें सन्देह नहीं है कि आज भारत न मुस्लिम शासन के अधीन है और न अंग्रेजी शासन के अधीन है। भारतवासी १२०० वर्षों की राजनैतिक दासता से तो मुक्त हो गया किन्तु दासता के अवशेष अभी तक बने हुए हैं, जिन्हें मिटाने का संघर्ष जारी है। अभी तक भारतवासी अनेक धार्मिक व सामाजिक अन्धविश्वासों से बँधे हुए हैं।

वर्तमान युग- पूर्वकाल में हमारा भारत देश सम्पूर्ण विश्व में आध्यात्मिक सन्देश देने का वाहक रहा है। भारत ने अपनी छाती पर अनेक विदेशी संस्कृतियों को झेला है किन्तु अपनी मूल वैदिक संस्कृति अभी भी जिन्दा रखा है। वर्तमान में हिन्दू रूढ़िवादी संस्कृति, मुस्लिम संस्कृति, क्रिश्चियन संस्कृति, बौद्ध संस्कृति, सिख संस्कृति आदि मूल ईश्वरीय वैदिक संस्कृति को प्रभावित कर रही हैं, इसी कारण सत्य-ज्ञान के अभाव में भारतीय राष्ट्रपति तक भी जड़ की पूजा कर रहे हैं। वे स्वयं पत्थर की मूर्तियों की प्राण प्रतिष्ठा में उपस्थित होते हैं, साधारण जनता की तो बात ही क्या है। पाश्चात्य संस्कृति भारतीयों के चूल्हे तक पहुँच गई है। परिवारों का आदर्श सत्य व्यवहार दिनों-दिन बिगड़ रहा है। विवाह शादियों में शराब जमकर पी जाती है। विवाह संस्कार की केवल खानापूर्ति हो रही है। विद्यालयों में केवल व्यावसायिक शिक्षा दी जा रही है, जीवन के आदर्श संस्कार नहीं दिये जा रहे हैं। धर्म के सत्संगों के नाम पर अनार्ष ज्ञान परोसा जा रहा है। जनता जहाँ ज्यादा भीड़ देखती है वहीं अपना रूख करके सत्य की अनदेखी करती हुई भेड़चाल चल रही है।

मैं मानता हूँ कि आर्यसमाज सत्य का प्रतिपादन तो कर रहा है किन्तु व्यक्ति विशेष की ओर सिमटता जा रहा है। आर्य परिवारों पर उपरोक्त विचारों का गहन प्रभाव पड़ रहा है? क्योंकि आर्य परिवारों की अधिकांश पुत्र-पुत्रियों की शादी गैर आर्य समाज परिवारों में हो रही है इसलिए वैदिक वातावरण अवैदिकता में दिनों-दिन घुलता जा रहा है और भी अनेक कारण हैं, जो कलेवर बढ़ने के कारण नहीं दे रहे हैं। आप स्वयं सत्य के ग्राही हैं, क्या इस युग का नामकरण कर सकते हैं।

देहरादून, उत्तराखण्ड

राजपूताने का शेर - महाराणा प्रताप

कन्हैयालाल आर्य

मेवाड़ राजपूताने का एक प्रमुख राज्य था। उदयसिंह मेवाड़ के सिंहासन पर बैठ चुका था। उसके अधिकार में अनेक सरदार थे। उनमें सोनगढ़ का सरदार राणा का भक्त था। उसने उदयसिंह के साथ अपनी पुत्री के विवाह का प्रस्ताव किया। मन्त्रियों और दूसरे सरदारों की स्वीकृति से वह विवाह हो गया फिर इसी रानी के गर्भ से हमारे वीर नायक राणा प्रताप ने जन्म लिया। यह बात कौन जानता था कि यह बालक वीरभूमि राजपूताने में ही नहीं वरन् समस्त भारतवर्ष में अपना नाम अमर कर जायेगा।

महाराणा उदयसिंह के पुत्रों में प्रताप सबसे बड़े थे। प्राचीन प्रथा के अनुसार अग्रज पुत्र ही सिंहासन का अधिकारी होता था, परन्तु महाराणा उदयसिंह में दूरदर्शिता का अभाव होने के कारण उसने अपने सबसे छोटे पुत्र जगमल को अपना उत्तराधिकारी बना दिया और यह भी नहीं सोचा कि यह कर्म न्याय के विरुद्ध है। प्रतापसिंह भी चुपचाप बिना मुँह खोले अपने पिता के इस अन्याय को देखते रहे। प्रताप अपने पिता के इस अन्यायपूर्ण व्यवहार से दुःखी होकर मेवाड़ छोड़ने की तैयारी कर रहे थे क्योंकि वे जानते थे कि मेवाड़ का राज्य बिल्कुल नष्ट-भ्रष्ट हो गया है। अस्तु, वे घोड़े पर सवार होकर अपनी मातृभूमि को त्याग कर जाने वाले ही थे कि उसी समय सामन्त, सरदारों ने आकर उन्हें रोक लिया और कहा कि आप चित्तौड़ की राजगद्दी की शोभा को बढ़ावें। आप ही बप्पा रावल और राणा साँगा के नाम को डूबने से बचा सकते हैं। प्रताप ने कुछ देर विचार कर कहा, ''यदि आप सब लोग मुझे इस योग्य समझते हैं कि मैं अपनी जाति और जन्मभूमि की सेवा कर सकूँगा और आप सब मेरी सहायता को तैयार हैं तो मुझे कोई आपत्ति नहीं?''

प्रतापसिंह को सिंहासन अवश्य मिला, इसमें सन्देह नहीं, किन्तु बिल्कुल खोखला, उसमें कुछ भी तत्त्व न था। चित्तौड़ की विशाल भव्य राजधानी इस समय श्मशान बनी हुई थी। अकबर चित्तौड़ को नष्ट-भ्रष्ट कर चुका था। प्रतापसिंह केवल नाम मात्र के राणा हुए। मेवाड़ की अवस्था शोचनीय तो थी ही, इसके अतिरिक्त राणा प्रतापसिंह चारों ओर से शत्रुओं से घिरे हुए थे। अकबर तो उनका कट्टर शत्रु था ही किन्तु साथ ही मारवाड़, अजमेर, जयपुर, जैसलमेर, बूँदी, बीकानेर इत्यादि के हिन्दू राजा भी उनके शत्रु हो रहे थे, जिन्होंने अपनी कन्या, बहिन देकर हिन्दू गौरव को सदा के लिए खो दिया था। प्रतापसिंह इन कुल-कलंकों को अति घृणा की दृष्टि से देखता था। उसके चाचा सागरसिंह तथा उसका भाई शक्तिसिंह भी स्वयं अकबर से जा मिले थे।

अकबर की असीम शक्तियाँ प्रताप को भयभीत न कर सकीं। उसके पास कोई शक्ति न थी, सेना न थी, सहायता न थी, परन्तु उसके हृदय का उत्साह उसके पास था। उसने निर्णय लिया, ''या तो मैं मुगल-सम्राट् अकबर को पराजित करूँगा और यदि ऐसा न हुआ तो मैं युद्ध क्षेत्र में मृत्यु का आलिंगन करूँगा, परन्तु मैं अपने जीवन में एक दिन के लिए भी मुगलों की अधीनता स्वीकार नहीं करूँगा।'' यह निर्णय करके प्रताप ने घोषणा की-

''प्यारे मित्रो! मैं आज आपके सम्मुख प्रतिज्ञा करता हूँ कि अपने और अपने वंशजों के लिए समस्त सुख भोग, आनन्द-आमोद बिल्कुल तृणवत् समझूँगा। जब तक चित्तौड़ को हम पुनः अपने अधिकार में न कर लेंगे, जब तक यवनों की राजधानी दिल्ली की ईंट से ईंट न टकरा देंगे, जब तक हम अपनी मान, प्रतिष्ठा और स्वतन्त्रता को प्राप्त न कर लेंगे उस समय तक मैं विश्राम न लूँगा। मैं अपनी वीरमाता के दूध की सौगन्ध खाकर कहता हूँ कि उस पीये हुए दूध की लाज मैं अवश्य रखूँगा और बस आज से मैं अपने समस्त सुख, भोग, ऐश्वर्य का त्याग करता हूँ। सोने और चाँदी के पात्रों के बदले मिट्टी के पात्र और पत्तों के दोने और पत्तलों का प्रयोग करूँगा। रेशम और बहुमूल्य कपड़ों के बदले देशी मोटे कपड़े पहनूँगा। कोमल गदेलों और शय्या को त्यागकर घास-फूस पर शयन करूँगा। मिष्टान्न, पकवान के बदले कन्दमूलों को अपना आहार बनाऊँगा। सिर और दाढ़ी के बाल नहीं कटाऊँगा। मित्रो!

क्या आप लोग मेरी इस प्रतिज्ञा-पूर्ति में तन-मन से मेरा हाथ बँटायेंगे।''

महाराणा प्रताप के मुँह से ऐसे वीरोचित वचन सुनकर सबके सब सरदारगण एक स्वर से बोल उठे, ''श्रीमान्! हम सब परमात्मा को साक्षी देकर सच्चे मन से प्रतिज्ञा करते हैं कि अपने स्वदेश को परतन्त्रता की बेड़ियों से मुक्त करने के लिए हम अपना सर्वस्व आपकी सेवा में भेंट करने के लिए तत्पर हैं। हमें पूरा-पूरा विश्वास है कि आप जैसे योग्य वीर साहसी राजा की अधीनता में हम लोग अवश्य सफल मनोरथ होंगे।''

महाराणा की प्रतिज्ञा बिजली की भाँति पलक मारते ही देश के कोने-कोने में चारों ओर फैल गई। उसने मेवाड़ के उन लोगों से परामर्श किया, जिन्होंने अपनी शक्तियों और तलवारों से मेवाड़ की स्वतन्त्रता सुरक्षित रखने में प्राणों का भय छोड़कर सदा युद्ध किया था। प्रताप ने राजस्थान के उन समस्त राजपूतों के साथ सम्बन्धों को तोड़ दिया जिन्होंने मुसलमानों के साथ सम्बन्ध करके अपनी जातीयता और धार्मिकता नष्ट की थी। इस विषय में उन्होंने एक आदेश निकाला, ''जिन राजपूतों ने अपनी बहिनों और लड़कियों के विवाह मुगलों के साथ करके सम्राट् का अनुग्रह प्राप्त किया है और अपने गौरव को नष्ट कर दिया है, उनके साथ सिसोदिया वंश के राजपूत न तो वैवाहिक सम्बन्ध करेंगे और न किसी प्रकार का सामाजिक सम्बन्ध रखेंगे।'' उसके इस निर्णय के कारण राजस्थान के कितने ही राजा उसके शत्रु बन गये। राजा मानसिंह उन सबमें प्रधान था। वह राजपूतों में श्रेष्ठ गिना जाता था और युद्ध में वह एक शूरवीर था। वह राजपूतों में 'कलियुग का अभिशाप' के नाम से पुकारा जाने लगा था।

प्रतापसिंह की प्रशंसा सुनकर राजा मानसिंह की यह प्रबल इच्छा थी कि एक बार जाकर उनका दर्शन करे। एक दिन की बात है कि मुगल सेनापति राजा मानसिंह शोलापुर दक्खिन को विजय करके लौट रहे थे कि एकाएक उन्हें अकबर का सन्देशा मिला, ''आगरा जाते समय रास्ते में प्रतापसिंह से अकेले भेंट करके उनकी आन्तरिक इच्छा क्या है, इसको भी मालूम करते आना। यदि सुयोग मिले तो शेर (अकबर प्रतापसिंह को शेर मानता था) को भी अपने जाल में फँसाने का प्रयत्न करना।'' अतः राणा प्रतापसिंह के पास एक विशेष दूत भेजकर उन्होंने कहलवाया कि मुझे एक बार आपके दर्शन करने की प्रबल इच्छा है। राणा ऐसे व्यक्ति से भेंट नहीं करना चाहते थे जिस व्यक्ति ने अपनी जाति और देश को रसातल में भेजकर अपने मान और प्रतिष्ठा को बढ़ाया है, किन्तु राजपूत सदा से अतिथि सत्कार में प्रसिद्ध है। शत्रु भी घर में आ जाये तो उसका आतिथ्य करना मनुष्य मात्र का धर्म है। यह विचार कर राणा ने राजा मानसिंह के आतिथ्य का भार कुँवर अमरसिंह को सौंप दिया। राजा मानसिंह ने जब अमरसिंह से राणा प्रतापसिंह जी के बारे में पूछा तो अमरसिंह ने कहा, ''राणा साहब के सिर में दर्द है इसलिए आने में असमर्थ हैं।'' यह सुनकर मानसिंह कहने लगे, ''जब तक परमात्मा की कृपा से राणा साहब जीवित है तब तक कुँवर साहब की गिनती बालकों में की जायेगी। जब तक राणा साहब नहीं आते, मैं एक दाना भी मुँह में नहीं लूँगा। राजा मानसिंह के बार-बार आग्रह को सुनकर प्रताप महल से बाहर निकल आये और मानसिंह को सम्बोधित करके बोले, मुझे बड़े दुःख के साथ कहना पड़ता है कि मैं उस व्यक्ति के साथ भोजन कैसे कर सकता हूँ जो यवनों का सम्बन्धी बनकर पतित हो गया हो।'' इस उत्तर से राजा मानसिंह के सारे शरीर में आग लग गई। महाराणा का उत्तर सुनकर राजा मानसिंह सिंह की भाँति गरज उठे और घोड़े पर सवार होकर बोले, ''हम बहुत शीघ्र शिर-पीड़ा की दवा लेकर आपके पास आयेंगे। उस समय आप को ज्ञात होगा कि मानसिंह का अपमान करके आपने कितना भयंकर काम किया है।'' प्रताप ने हँसते हुए कहा, ''राजा साहब! प्रताप युद्ध के मैदान में ही आपकी अतिथि सेवा करेगा'' जैसे ही मानसिंह घोड़े पर सवार हुआ तो किसी मुँहफट राजपूत ने यह भी कह दिया कि अपने फूफा अकबर को भी साथ लेते आना।

प्रताप के हाथों अपमानित होकर मानसिंह सीधा अकबर के पास पहुँचा और जो कुछ हुआ था उसमें नमक-मिर्च लगाकर अकबर के सामने वर्णन कर दिया। सुनते ही भीतर मन से तो अकबर बहुत प्रसन्न हुआ परन्तु बनावटी क्रोध दिखाते हुए बोला, ''क्या प्रतापसिंह की

इतनी हिम्मत बढ़ गई है कि वह राजा मानसिंह जैसे शूरवीर से इस प्रकार बदतमीजी से पेश आये। अब लगता है कि इस अभिमानी प्रताप को धूल चटानी ही पड़ेगी।''

मानसिंह के चले जाने के पश्चात् राणा प्रताप ने समझ लिया कि अकबर के साथ होने वाला युद्ध अब निकट आ गया है। मेवाड़ के समस्त गाँवों को प्रतापसिंह ने खाली करा दिया और अपनी प्रजा को लेकर पर्वत के उन स्थानों पर चला गया जो दुर्भेद्य जंगलों से चतुर्दिक घिरे हुए थे। हुआ भी वही जो राणा प्रताप सोच रहा था, परन्तु उनके विश्वासपात्र देशभक्त सैनिक राणा प्रताप के साथ थे। महाराणा की सेना केवल बीस हजार थी, किन्तु उधर अकबर की सेना लाखों की संख्या में थी। राणा के चुने हुए २२ हजार वीर राजपूत सैनिक स्थान छोड़कर हल्दी घाटी के मैदान में आ डटे। राजा मानसिंह और शहजादा सलीम इस विश्वास में थे कि राणा प्रताप की सेना पर्वत से उतरकर नीचे आयेगी, परन्तु राजपूत सैनिकों ने हल्दी घाटी के जिस विशाल स्थान पर अपनी सेना लगा रखी थी, उसका प्रवेश द्वार तंग था। ज्यों ही मुगल सेना वहाँ आई। राणा प्रताप ने राजपूत सेना को आक्रमण का आदेश दे दिया। दोनों ओर से मारकाट हुई, परन्तु राजपूत सेना ने मुगल सेना के छक्के छुड़ा दिये। राणा प्रताप मानसिंह की ओर बढ़ रहा था। उस समय मुगल सेना में प्रवेश करते हुए उसे अकबर का बेटा सलीम हाथी पर बैठा हुआ युद्ध के बीच में दिखाई पड़ा। उसको देखते ही प्रताप ने उग्र होकर अपने चेतक घोड़े को उसकी ओर बढ़ाया। प्रताप ने सलीम पर अपने भाले का जोरदार आक्रमण किया। उस भाले से सलीम तो बच गया, परन्तु उसका अंगरक्षक मारा गया। महावत के मरते ही सलीम का हाथी युद्ध क्षेत्र से बाहर की ओर भागा। राणा प्रताप ने उसका पीछा किया। राजपूतों ने देखा कि युद्ध करते हुए प्रताप शत्रुओं के बीच में पहुँच गया है। राजपूत सेना ने मुगल सेना के व्यूह को तोड़ने का प्रयास किया। इसी बीच मुगल सैनिकों के बहुत से सेनापतियों ने राणा प्रताप को घेर लिया। हल्दी घाटी का सम्पूर्ण युद्ध उस समय उसी स्थान पर केन्द्रित हो गया। राणा प्रताप इस संकट को भलीभाँति समझ चुका था। उस समय उसके घोड़े चेतक ने जिस प्रकार राणा का साथ दिया, वह सर्वथा अकथनीय है। उस घोड़े ने शत्रुओं के बीच प्रताप को सभी प्रकार अजेय बना दिया था। इस समय राणा के शरीर में अनेक घाव हो गये, घावों से रक्त के फव्वारे निकल रहे थे। उसी समय झाला राज्य के शूरवीर मन्ना जी के सहयोग से और मन्ना जी का संकेत पाकर, राणा प्रताप बड़ी चतुराई से राजपूत सेना के बीच होकर बाहर निकल गया।

हल्दी घाटी का युद्धक्षेत्र छोड़कर प्रताप अकेला दक्षिण की ओर प्रस्थान कर गया। मुगलों को पराजित करने की उसकी सम्पूर्ण आशायें धूमिल हो गईं। राणा प्रताप के हटते ही युद्ध बन्द हो गया। राणा प्रताप ने दूर से मुगल सैनिकों को देखा। राणा का सगा भाई भी अकबर के पक्ष में प्रताप के विरुद्ध युद्ध करने आया था, क्योंकि वह भी राणा प्रताप से अप्रसन्न होकर अकबर से जा मिला था। चाहे भाई एक-दूसरे के शत्रु थे, परन्तु रक्त ने एक-दूसरे को पुनः मिलने का अवसर दे दिया। शक्तिसिंह ने राणा को आवाज दी, उनके पैरों पर पड़ा। कुछ देर तक दोनों भाइयों के अश्रुपात होते रहे। लगातार रक्तपात से घोड़े के प्राण अस्त-व्यस्त हो रहे थे। प्रताप के उतरते ही घोड़ा गिर गया और उसकी मृत्यु हो गई। शक्तिसिंह ने अपना घोड़ा राणा प्रताप को दे दिया और वापस सलीम के पास लौट आया। सलीम को शक्तिसिंह पर सन्देह हुआ और सलीम ने शक्तिसिंह को मुगल सेना से चले जाने की आज्ञा दी। शक्तिसिंह भी यही चाहता था। दोनों भाइयों में प्रेम पुनः हो गया।

हल्दी घाटी के युद्ध में राजपूत सेना को बहुत हानि हुई। वर्षा प्रारम्भ हो गई। वर्षा समाप्त होते अकबर ने पुनः प्रताप का सर्वनाश करने के लिए तैयारियाँ प्रारम्भ कर दीं। राणा प्रताप ने उदयपुर छोड़कर कमलगीर में रहने का निश्चय किया, परन्तु वह भी स्थान सुरक्षित न पाकर वह आगे बढ़ गया। अकबर के पास अगणित सेना थी। वह अलग-अलग सेनापतियों के संरक्षण में शिकारी कुत्तों की तरह प्रताप का पीछा करती रही। प्रताप के पास सैनिकों का सर्वथा अभाव हो चुका था इसलिए भयानक जंगलों के रहने के अतिरिक्त और कोई मार्ग नहीं बचा था। एक घटना ने राणा प्रताप को बुरी तरह हिला दिया। घास की रोटी खाने को विवश होना पड़ा। एक-एक घास की रोटी

बच्चों को दी, परन्तु राणा की छोटी लड़की से एक वन-बिलाव रोटी छीनकर ले गया, उस लड़की की चीख निकली। इस दृश्य को देखकर राणा प्रताप का कलेजा हिल गया। अन्ततः उसने अकबर के सम्मुख आत्म-समर्पण करने का निश्चय कर अकबर को एक पत्र लिखा। पत्र पढ़ते ही अकबर अत्यन्त प्रसन्न हुआ।

बीकानेर के राजा रायसिंह ने सम्राट् अकबर की अधीनता स्वीकार कर ली, परन्तु उसका भाई पृथ्वीराज सम्राट् का विरोधी था। पृथ्वीराज स्वाभिमानी और स्वतन्त्रता-प्रिय था। वह राणा प्रताप का समर्थक था। जब पृथ्वीराज को राणा प्रताप के इस आत्मसमर्पण का पता चला तो उसने राणा प्रताप को एक कविता लिखकर भेजी। जिससे राणा प्रताप के अवरुद्ध नेत्र खुल गये, तुरन्त राणा प्रताप ने निश्चय किया कि मैं सम्राट् के सामने अपना मस्तक नहीं झुकाऊँगा। मुगल सेना के साथ युद्ध नहीं कर सकता अतः कहीं दूर जाकर ठहरने का स्थान बनाने का इरादा मित्र सरदारों के सामने रखा। उस समय राणा के पास जो लोग एकत्रित हुए थे, उसमें मेवाड़ राज्य का वृद्ध मन्त्री कोषाध्यक्ष भामाशाह भी था। उसने राणा के प्रस्ताव और निर्णय को भी सुना। उसने कुछ देर मन में विचार किया और यह समझकर कि प्रताप के इस निर्णय के साथ राजपूत जाति का गौरव अस्त हो रहा है। उसने राणा से अपना निर्णय वापस लेने की प्रार्थना की और अपने पूर्वजों की एकत्रित सम्पूर्ण सञ्चित सम्पत्ति सहायता के रूप में देने का वचन दिया। वह सम्पत्ति इतनी अधिक थी कि उस सम्पत्ति से २० हजार सैनिक रखकर सम्राट् अकबर के साथ १२ वर्ष तक युद्ध किया जा सकता था। इस सहायता की घोषणा होते ही उपस्थित सरदारों में एक साथ बिजली दौड़ गई। महाराणा प्रताप ने एक बार पुनः संग्राम की घोषणा कर दी। अनेक स्थानों पर मुगल सेनाओं का विध्वंस कर राणा प्रताप अपनी विजयी राजपूत सेना के साथ मानसिंह के अम्बेर राज्य की ओर प्रस्थान किया। चित्तौड़ और कुछ दूसरे स्थानों को छोड़कर शेष मेवाड़ राज्य मुगलों के आधिपत्य से स्वतन्त्र हो गया और राणा प्रताप ने उन पर अधिकार कर लिया। उदयपुर पर अधिकार कर लेने के पश्चात् वहाँ अपनी राजधानी स्थापित की।

राणा प्रताप को यह पीड़ा रही कि वह चित्तौड़ को स्वतन्त्र न कर सके। इस मानसिक वेदना और पीड़ा के कारण प्रताप का स्वास्थ्य नष्ट होता गया। महाराणा मृत्यु शय्या पर पड़े छटपटाकर व्याकुलता से करवट बदल रहे थे। उनकी यह अधीरता उनके सामन्तों को चकित और दुःखी कर रही थी। उनके आश्चर्य का कारण यह था कि महाराणा जीवन-भर मृत्यु से कभी भयभीत नहीं हुए, किन्तु आज जब मृत्यु सम्मुख है तो वे उसे देखकर कातर और व्याकुल क्यों हैं? अन्ततः एक साहसी सामन्त ने महाराणा से हाथ जोड़कर पूछ ही लिया, ''महाराणा! हम लोगों ने कठिन से कठिन परिस्थिति में भी आपको व्याकुल नहीं देखा। आप सदैव मृत्यु को देखकर मुस्कराये हैं, परन्तु इस समय आपकी व्याकुलता एवं अशान्ति को देखकर हम चिन्तित हैं। अपनी चिन्ता का कारण हमें बताइये, हम अपनी जान की बाजी लगाकर भी आपकी उस इच्छा को पूर्ण करेंगे।'' सामन्त की बात को सुनकर महाराणा ने उत्तर दिया, ''तुम ठीक कहते हो। एक साधारण सी घटना की स्मृति ने मुझे अशान्त कर रखा है। एक दिन मैं झोंपड़ी में बैठा था। सामने की झोंपड़ी से मेरा पुत्र अमरसिंह निकला। अब ये झोंपड़ियाँ है, ये कोई महल नहीं इनके द्वार भी ऐसे हैं, जिसमें से झुककर आना-जाना पड़ता है। निकलते हुए अमरसिंह की पगड़ी एक बाँस में उलझकर गिर गई। इस साधारण सी बात पर वह आगबबूला हो गया और अपनी तलवार से रस्सी के बन्धन काट कर बाँस खींचकर पृथ्वी पर फेंक दिया। इस घटना का मेरे ऊपर यह प्रभाव है कि मेरी मृत्यु के पश्चात् अमरसिंह इन झोंपड़ियों में न रह सकेगा। महलों के सुख-सुविधायें प्राप्त करने की उसकी इच्छा बनेगी। संघर्ष करने में जो तप अपेक्षित है, उससे वह कतरायेगा और मुगलों की अधीनता स्वीकार कर लेगा। इस प्रकार मेरी सारी तपस्या व्यर्थ हो जायेगी। बस, यही बात है जो मुझे चैन से मरने नहीं दे रही।''

सब साथियों ने राणा की चिन्ता सुनकर म्यान से तलवारें खींच लीं और प्रतिज्ञा करते हुए कहा, ''राणा! जब तक हम जीवित हैं, आपके पुत्र को बादशाह के आगे झुकने नहीं देंगे।'' महाराणा साथियों और सामन्तों की इस प्रतिज्ञा से आश्वस्त हो गये तथा प्रसन्नतापूर्वक थोड़ी ही देर

में अपने प्राणों का परित्याग कर दिया।

प्रताप का जीवन ऐसा था कि शत्रु भी उनका आदर करते थे। बादशाह अकबर महाराणा प्रताप के देहान्त का समाचार सुनकर एकदम चुप हो गये। यह देखकर दरबारियों को बड़ा अचम्भा हुआ कि महाराणा प्रताप की मृत्यु का समाचार सुनकर प्रसन्न होना चाहिये था, न कि उदास। अकबर ने सामन्तों की इस हैरानी को देखकर कहा, ''राणा प्रताप एक वीर था, उसकी मृत्यु जिस प्रकार हुई उस स्थिति को सोचकर मैं दुःखी हूँ। वीर तो सदैव युद्ध-भूमि में वीरगति को प्राप्त करते हैं, चाहे वह जीवन भर मेरा शत्रु रहा और मुझे यह खेद भी सदैव रहेगा कि मैं उसे जीते जी अधीन नहीं कर सका, परन्तु मैं आज उस वीर-पुंगव को उसकी वीरता के लिए प्रणाम करता हूँ।''

हे वीर पुंगव! यद्यपि आज तुम इस संसार में नहीं हो तथापि तुम्हारा सुनाम, कीर्ति और पवित्र स्मृति सदा कायरों को वीर बनाने में संजीवनी का काम करेगी। यद्यपि आज प्रताप का भौतिक शरीर हमारे बीच विद्यमान नहीं है, परन्तु उनका यशरूपी शरीर हमें सदैव प्रेरणा देता रहेगा।

* सन्दर्भ ग्रन्थ

१. श्रुति सौरभ, लेखक-पं. शिवकुमार शास्त्री

२. महाराणा प्रताप, लेखक-श्री केशव कुमार ठाकुर

३. महाराणा प्रताप, प्रकाशक-सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली

४. महाराणा प्रताप, लेखक-श्री राजेन्द्र शंकर भट्ट

गुरुकुल के लिये प्रवेश-सूचना

परोपकारिणी सभा, अजमेर द्वारा संचालित महर्षि दयानन्द आर्ष गुरुकुल, ऋषि उद्यान-अजमेर में वैदिक धर्म एवं आर्यसमाज के उपदेशक तैयार करने हेतु उपदेशक कक्षा में प्रवेश प्रारम्भ हैं।

प्रवेशार्थी की न्यूनतम आयु १४ वर्ष तथा कक्षा आठ या उससे अधिक उत्तीर्ण हो। आर्ष-पद्धति से व्याकरण, दर्शन तथा महर्षि निर्दिष्ट पाठ्यक्रम के अध्यापन की व्यवस्था है।

गुरुकुल में अध्यापन, भोजन एवं आवास की निःशुल्क व्यवस्था है।

प्रवेश के इच्छुक अभ्यर्थी सम्पर्क करें-

आचार्य, आर्ष गुरुकुल, ऋषि उद्यान, पुष्कर रोड, अजमेर।

दूरभाष- ९८७९५८७७५६

परोपकारिणी सभा द्वारा आयोजित आगामी कार्यक्रम

१. १३ से २० अक्टूबर, २०१९- **योग-साधना शिविर**

२. ०१, ०२, ०३ नवम्बर २०१९- **ऋषि मेला**

ऋषि उद्यान में होने वाले कार्यक्रमों के लिए

सम्पर्क सूत्र- ०९४६०४२११८३, ०१४५-२४६०१६४, ०१४५-२६२१२७०

राजा और प्रजा सब लड़के-लड़कियों को विद्वान् बनाने का प्रयत्न करें

आजकल के सम्प्रदायी और स्वार्थी ब्राह्मण आदि जो दूसरों को विद्या-सत्संग से हटा और अपने जाल में फँसा के उनका तन, मन, धन नष्ट कर देते हैं और चाहते हैं कि जो क्षत्रियादि वर्ण पढ़कार विद्वान् हो जायेंगे तो हमारे पाखण्ड जाल से छूट और हमारे छल को जानकर हमारा अपमान करेंगे। इत्यादि विघ्नों को राजा और प्रजा दूर करके अपने लड़कों और लड़कियों को विद्वान् करने के लिए तन, मन, धन से प्रयत्न किया करें। (स. प्र. स. ३)

शङ्का समाधान - ५०

डॉ. वेदपाल

शङ्का- मुण्डक-१.२.४ अग्नि के सात प्रकार क्या हैं?

कंचन सिंह कांवत, खेरली, अलवर

समाधान- आपने माण्डूक्य ३.२.४ का पता लिखा है। माण्डूक्य में अग्नि का सन्दर्भ नहीं है। मुण्डकोपनिषद् प्रथम मुण्डक के द्वितीय खण्ड में अग्नि का वर्णन है। तद्यथा-

काली कराली च मनोजवा च
सुलोहिता या च सुधूम्रवर्णा।
विस्फुलिङ्गिनी विश्वरुची च देवी
लेलायमाना इति सप्तजिह्वाः।।

इससे पूर्व अग्निहोत्र कर्म के प्रसंग में प्रदीप्त अग्नि में अग्नि-शिखा के खेलने पर आज्यभागाहुति देने का निर्देश है-

यदा लेलायते ह्यर्चिः समिद्धे हव्यवाहने।
तदाज्यभागावन्तरेजाहुतीः प्रतिपादयेत्।। -२

अतः यहाँ अग्निहोत्र की अग्नि में उठने वाली अग्निशिखाओं/लपटों को अग्नि की सात जिह्वा=अग्नि में प्रदत्त हवि को ग्रसने वाली जिह्वा कहा है। व्यक्ति भोज्य पदार्थों को जिह्वा के द्वारा ही ग्रसन करता है। इसी प्रकार यदि अग्नि सम्यक् प्रदीप्त हो, उसमें अग्निशिखाएं= लपटें न उठ रही हों, तब प्रदत्त हवि का भस्मीकरण/रूपान्तरण (विविध गैस में बदलकर वायुमण्डल में फैलना) सम्भव नहीं है। अतः इन अग्नि-शिखाओं को ग्रसन-रूपान्तरण में सहायक होने के कारण जिह्वा कहा गया है।

अग्नि की ये शिखाएं सात प्रकार की दिखाई देती हैं- १. काली= कृष्णवर्णा २. कराली= भयंकर ३. मनोजवा= मन के सदृश वेगवती ४. सुलोहिता= लाल रंग युक्त ५. सुधूम्रवर्णा= धुएं के रंग वाली ६. विस्फुलिङ्गिनी= चिंगारियों वाली तथा ७. विश्वरुची= नाना शोभा वाली।

अग्नि जब पर्याप्त प्रदीप्त होती है, जिसमें प्रदान करते ही हव्य पदार्थ भस्म हो जाए- ऐसी प्रदीप्त अग्नि की वे ज्वालाएं विविधवर्णा होती हैं। ऐसा किसी बृहद् यज्ञ (दैनिक यज्ञ में अधिकांशतः ऐसा सम्भव नहीं।) के समय स्पष्ट देखा जा सकता है। जिस प्रकार जिह्वा पर पहुँचते ही भोज्य पदार्थ पचनार्थ अन्दर (जठराग्नि पर) चला जाता है, उसी प्रकार प्रदीप्त अग्नि पर प्रदान की गई हविः रूपान्तरित हो जाती है। बहुधा इतनी तीव्र अग्नि पर घृत आदि की आहुति वेदि में प्रज्वलित समिधा तक पहुँचती भी नहीं, अपितु उन लपटों/जिह्वाओं पर पड़ते ही रूपान्तरित हो जाती है। इस प्रकार प्रदीप्त अग्नि की ज्वालाओं में दृष्टिगत होने वाले ये सप्त वर्ण=रूप ही यहाँ जिह्वा पद द्वारा कहे गए हैं। ये अग्नि के प्रकार-भेद न होकर प्रदीप्त अग्नि की अर्चि-लपट के प्रकार हैं। शास्त्र में जो अग्नि के भेद हैं, उनमें किसी भी अग्नि के प्रदीप्त होने पर उसकी अर्चि इन्हीं रूपों से युक्त होगी।

मार्कण्डेय पुराण अध्याय ९९ में भी अग्नि की इन्हीं सात जिह्वाओं का वर्णन द्रष्टव्य है।

संस्कृत वाङ्मय में अग्नि के गुणवर्णन पूर्वक अनेक नाम उपलब्ध है। तद्यथा-

१. बलदः- दुर्बलानान्तु भूतानामसून् यः सम्प्रयच्छति।
तमग्निं बलदं प्राहुः प्रथमं भानुतः सुतम्।।

२.विश्वभुक्- अन्तरग्निः स्मृतो यस्तु भुक्तं पचति देहिनाम्।
स जज्ञे विश्वभुङ् नाम सर्वलोकेषु भारत।।

३.निश्च्यवन- यस्तु न च्यवते नित्यं यशसा वर्चसा श्रिया।
अग्निर्निश्च्यवनो नाम पृथिवीं स्तौति केवलम्।।

इसी प्रकार पावकः, भरतः, पुष्टि आदि गुणाश्रित नाम हैं, किन्तु ये प्रकार नहीं हैं। प्रकार की दृष्टि से आहिताग्नि की यज्ञशाला में रहने वाले- **गार्हपत्य**, **दक्षिण**, सभ्य, **आह्वनीय**, आवसथ्य-ये पाँच कहे जा सकते हैं। इन पाँच के अतिरिक्त **अन्नाद** तथा **क्रव्याद** भी हैं, किन्तु इस प्रकार गिनाये गए श्रौत पाँच तथा अन्त्य दो (सात होने पर भी) उपनिषद् वर्णित सप्तजिह्वा नहीं हैं। वहाँ अभिप्रेत अर्चि प्रकार भेद ही हैं।

संस्था की ओर से....

क्या आप प्रतिदिन अतिथि यज्ञ नहीं कर पाते?
तो आइये, अतिथि यज्ञ के होता बनिये

वैदिक नित्यकर्मों में अतिथि यज्ञ प्रतिदिन करना अनिवार्य है, किन्तु आपको प्रतिदिन अतिथि मिलना संभव नहीं, फिर अतिथि यज्ञ कैसे किया जाय? इसका उपाय है, कुछ राशि प्रतिदिन अतिथि यज्ञ के नाम से निकाल ली जाये और उसको एकत्र कर अतिथि सत्कार में गुरुकुल में भोजन आदि के सहयोग में दे दी जाय।

यह अल्प राशि आप दैनिक संचय घट में जमा भी कर सकते हैं, वर्ष में लोग अरबों रुपए आग में पटाखे जलाकर व्यय करते हैं, असावधानी से बिजली जलती छोड़ इसे गंवा देते हैं आदि ऐसी छोटी-छोटी असावधानियों को रोक कर हम उसकी बचत राशि इस पावन कृत्य हेतु सभा को वर्ष में आसानी से दे सकते हैं।

सभा के धार्मिक क्रियाकलापों एवं आवासीय स्थल ऋषि उद्यान में उपर्युक्त पावन क्रियाकलाप लम्बे समय तक अबाध चलते रहें, इसके लिए सभा की योजना है कि प्रतिदिन प्रतिवर्ष ५ हजार एक सौ रु. की राशि प्रदान करने वाले उदार यशस्वी दानदाताओं का नाम अतिथि यज्ञ के स्थायी सदस्यों में अंकित किया जाता है ऐसे सज्जनों के नाम का परोपकारी में प्रकाशित भी किय जात हैं।

यदि अपने सामर्थ्य के अनुसार राशि को न्यूनाधिक करना चाहें तो आपकी स्वतन्त्रता है अधिक से अधिक लोग परोपकारिणी सभा से जुड़ सकें, आप ऐसा करके ऋषि दयानन्द के कार्यों को आगे बढ़ाने में सहायक होंगे इसलिए ऐसी राशि निश्चित की है। आप से प्रार्थना है अपना नाम पता और संकल्प लिखकर अवगत करायें और अतिथि यज्ञ के होता बनें। अपनी राशि प्रतिमाह अथवा सुविधानुसार मनीआर्डर/डीडी/चैक द्वारा अथवा स्वयं उपस्थित होकर कार्यालय में जमा करा सकते हैं। आपका दान ८०जी (आयकर की धारा) के अंतर्गत कर मुक्त होगा।

अनेक 'अतिथि यज्ञ के होता' सदस्यों का आग्रह है, निश्चित तिथि जन्मदिन, विवाह वर्षगांठ या विशेष अवसर पर वे अपनी ओर से संस्था में भोजन कराना चाहते हैं। ऐसे महानुभावों से निवेदन है कि वे अतिथि यज्ञ के होता के रूप में एक दिन के भोजन व्यय की राशि लगभग पाँच हजार एक सौ रुपये भेजते हुए इच्छित दिन का विवरण सूचित करेंगे तो उन्हें उनके जन्मदिवस आदि पर परोपकारिणी सभा की ओर से दूरभाष द्वारा आशीर्वाद प्रदान किया जायेगा। यदि उस शुभ अवसर पर वे स्वयं उपस्थित होकर यजमान बनें तो यह सर्वोत्तम होगा।

अतिथि-यज्ञ के होताओं से अनुरोध

अतिथि-यज्ञ के होताओं से उनकी वैवाहिक वर्षगाँठ अथवा जन्मदिन व विभिन्न अवसरों पर ५१०० रु. प्रतिवर्ष सभा को प्राप्त होते रहते हैं। जो महानुभाव संकल्प के साथ इस पुनीत कार्य से जुड़े हुए हैं, उनसे हमारा अनुरोध है कि वे अपनी राशि भेजते समय **जन्मतिथि/वैवाहिक वर्षगाँठ आदि व दूरभाष संख्या** सूचित करना न भूलें। साथ ही यह भी अवश्य सूचित करा देवें कि पहले से भिजवा रहे हैं अथवा नया शुरू किया है। आप अपनी राशि सभा के बैंक खाते में नकद अथवा चैक द्वारा जमा करा सकते हैं।

परोपकारिणी सभा की गतिविधियाँ

परोपकारिणी सभा महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा स्थापित उनकी उत्तराधिकारिणी सभा है और केवल नाम से ही नहीं, बल्कि अपने कार्यों से भी वह ऋषि के उत्तराधिकार के दायित्व को पूर्णतया निभा रही है। महर्षि दयानन्द सरस्वती

ने इस सभा की स्थापना के समय तीन उद्देश्य रखे थे।

१. वेदादि सत्यशास्त्रों का प्रकाशन २. विद्वान् उपदेशक तैयार करके देश-विदेश में वैदिक धर्म का प्रचार एवं ३. आर्यावर्त्तीय दीन-दरिद्रों की सेवा।

इन सभी कार्यों को सभा अपने विभिन्न प्रकल्पों के माध्यम से पूरा करने में सर्वसामर्थ्य से लगी हुई है। यद्यपि सभा के पास आर्थिक आय का कोई स्थाई माध्यम नहीं है, पुनरपि ऋषिभक्तों एवं आर्यजनों के सहयोग और विश्वास पर ही सभा ने बड़े-बड़े कार्यों को प्रारम्भ किया और निरन्तर कर भी रही है। आचार्य डॉ. धर्मवीर जी, जो कि वर्तमान में परोपकारिणी सभा के प्रधान एवं मूल स्तम्भ थे, उनका कहना था कि **''कार्य यदि अच्छा है तो उसे प्रारम्भ कर देना चाहिये, सहयोग तो स्वयं ही मिल जाता है।''** यही शैली अपनाकर आज भी वैदिक विचार के प्रचार का कार्य निरन्तर जारी है। डॉ. धर्मवीर जी के जाने से सभा को बड़ा आघात अवश्य लगा है, परन्तु आर्यों का स्नेह, भरोसा उनके द्वारा प्रारम्भ किये गये कार्यों को रुकने नहीं देगा-ऐसा सभा को पूर्ण विश्वास है।

परोपकारिणी सभा आज अनेक कार्यों, माध्यमों से इस वेद प्रचार यज्ञ में लगी है, जिसकी सूची यहाँ दी जा रही है-

भव्य ऋषि उद्यान आश्रम, अतिथि यज्ञ, भोजनशाला, गौशाला, वानप्रस्थ एवं संन्यासाश्रम, गुरुकुल, परोपकारी पत्रिका, प्रकाशन, योग साधना एवं चरित्र निर्माण शिविर, सत्यार्थ प्रकाश व ऋषि जीवन चरित्र का निःशुल्क वितरण, पाण्डुलिपियों का डिजिटलाइजेशन, पुस्तकालय, औषधालय, देश-देशान्तरों में वेद-प्रचार, आयुर्वेदिक औषधालय।

दयानन्द धर्मार्थ चिकित्सालय

परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित ऋषि उद्यान में वर्ष २०१२ से आयुर्वेदिक चिकित्सालय चल रहा है। चिकित्सालय में उपलब्ध सभी औषधियाँ निःशुल्क दी जाती हैं।

दानी महानुभावों से सहयोग की भी अपेक्षा है।

परोपकारिणी सभा में आयुर्वेदिक चिकित्सक की आवश्यकता

सभा द्वारा संचालित आयुर्वेदिक चिकित्सालय के लिये योग्य आयुर्वेदिक चिकित्सक की आवश्यकता है। चिकित्सालय में सेवा देने का समय प्रतिदिन २ घण्टे है। आवास, भोजन आदि की व्यवस्था सभी की ओर से ही होगी।

सम्पर्क- ०१४५-२६२१२७०, ९४६०४२११८३

परोपकारिणी सभा के प्रकल्पों में सहयोग करने हेतु

खाताधारक का नाम - परोपकारिणी सभा, अजमेर (PAROPKARINI SABHA AJMER)

१. बैंक का नाम-भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी बाजार, अजमेर।

बैंक बचत खाता (Savings) संख्या-**10158172715**

IFSC-SBIN0007959

२. बैंक का नाम-आई.डी.बी.आई, पावर हाउस के सामने, जयपुर रोड, अजमेर।

बैंक बचत खाता (Savings) संख्या-**091104000057530**

IFSC-IBKL0000091 email : psabhaa@gmail.com

दानदाताओं की सूची

अतिथि यज्ञ के होता

(१६ से ३१ मई २०१९ तक)

१. श्री संजय विरमानी, लुधियाना २. श्री भास्कर सेन गुप्ता, अमेरिका ३. श्री राजाराम त्यागी, हरिद्वार ४. श्री परमानन्द पटेल, इलाहाबाद ५. मै. स्वस्तिकॉम चैरिटेबिल ट्रस्ट, अमरावती ६. श्री रामवीर चुघ, पंचकुला ७. श्री कृष्ण कुमार शर्मा, अलवर।

गोभक्तों से निवेदन

ऋषि-उद्यान में परमार्थ हेतु गौशाला संचालित है। गोशाला की गौवों के दूध का वितरण सभी गुरुकुलवासियों, संन्यासियों एवं आगन्तुक अतिथियों में निःशुल्क किया जाता है। आप सभी गौ-भक्तों एवं उदारमना दानदाताओं से सभा का निवेदन है कि गौवों को उत्तम चारा मिले, इसके लिए जो भी सज्जन चारा दान देना चाहें उनका स्वागत है। यदि आप दूरस्थ प्रदेश के हैं तो कृपया चारे हेतु अनुमानित राशि सभा को ड्राफ्ट/चैक/नगद भेज सकते हैं। यशस्वी दानदाताओं के नाम परोपकारी पत्रिका में प्रकाशित किए जाएँगे। आपका दान गौवों के संवर्धन में सहायक होगा।

ऋषि-उद्यान में संचालित गौशाला के दानदाता

(१६ से ३१ मई २०१९ तक)

१. श्री माणिकचन्द जैन, छोटी खाटू २. श्री उदयचन्द पटेल, बंगलुरु ३. श्री हरसहाय सिंह आर्य, बरेली ४. श्री राजाराम त्यागी, हरिद्वार ५. डॉ. सीता देवी, उज्जैन ६. श्रीमती चम्पा देवी, अजमेर ७. श्रीमती स्वर्ण मालेवर, अजमेर।

अन्न संग्रह (दानदाता)

१. श्रीमती पुष्पा शर्मा, अजमेर २. श्री अमरचन्द माहेश्वरी, अजमेर ३. श्रीमती उर्मिला माहेश्वरी, अजमेर ४. डॉ. राजेन्द्र सिंह आर्य, लाडनूं, नागौर ५. श्रीमती चन्द्रकान्ता छापरवाल, अजमेर ६. श्री जगदीशचन्द्र यादव, अजमेर ७. श्री दुर्गाशंकर कृष्ण कन्हैया मन्त्री चेरिटेबिल ट्रस्ट, अजमेर ८. श्री रामबिलास माहेश्वरी, अजमेर ९. श्री श्यामप्रकाश सोमानी, अजमेर १०. श्री पुरुषोत्तम बूब, अजमेर ११. श्रीमती शान्तिदेवी, अजमेर १२. श्री जतन हेड़ा, अजमेर १३. श्री गणपत देव सोमानी, अजमेर १४. श्री महेश चन्द सोमानी, अजमेर १५. मै. वर्मा एण्ड कं. अजमेर १६. श्री अभिनव बाल्दी, अजमेर १७. श्री मनीष पण्ड्या, अजमेर १८. श्रीमती सुलेखा शर्मा, अजमेर १९. श्री ओमप्रकाश लढ्ढा, अजमेर २०. श्री रामचन्द्र सोमानी, अजमेर २१. श्री लक्ष्मीनारायण मालू, अजमेर २२. श्री ताराचन्द माहेश्वरी, अजमेर २३. श्री राधेश्याम अग्रवाल, अजमेर २४. श्रीमती राजकुमारी मल्होत्रा, अजमेर २५. श्री मयंक कुमार, अजमेर २६. श्री नवाल बाँगड़, अजमेर २७. श्री रामेश्वरलाल पारीक, अजमेर २८. मै. राजपूताना म्यूजिक हाऊस, अजमेर २९. श्री ज्ञानसिंह पँवार, अजमेर ३०. मै. ड्रीम मार्बल्स, किशनगढ़ ३१. श्री ओमप्रकाश ईनाणी, किशनगढ़ ३२. श्री भोजराज राठी, किशनगढ़ ३३. श्री ओमप्रकाश सोमानी, अजमेर ३४. श्री मुरलीधर छापरवाल, अजमेर ३५. श्री बालमुकुन्द छापरवाल, अजमेर ३६. श्रीमती शान्ति देवी बंग, अमृतसर ३७. श्रीमती चन्द्रकान्ता माहेश्वरी, अजमेर ३८. श्री रामेश्वरलाल सोमानी, अजमेर ३९. श्री आशुतोष पारीक, अजमेर ४०. श्री दीपचन्द मूँदड़ा, अजमेर ४१. श्री ओमप्रकाश वैष्णव, अजमेर ४२. श्रीमती मञ्जु माथुर, अजमेर ४३. श्री राम तोलानी, अजमेर ४४. श्रीमती सरोज शर्मा, अजमेर ४५. श्री मोहनलाल तँवर, अजमेर ४६. श्रीमती ओमवती पारीक, अजमेर ४७. श्री जगदीश प्रसाद तापड़िया, किशनगढ़ ४८. श्री रामपाल छीपा, किशनगढ़ ४९. श्री यश मुनि, परबतसर ५०. केशव मेडिकल स्टोर, परबतसर ५१. श्रीमती रतनी बँग, परबतसर ५२. आर्यसमाज कुचामनसिटी, नागौर ५३. श्री नानूराम ढाका, निम्बी-जोधा ५४. डॉ. उमेश आर्य, लाडनूँ, नागौर ५५. श्री रामचन्द्र सिंह आर्य, लाडनूँ, नागौर ५६. आर्यसमाज दुजार, नागौर ५७. आर्यसमाज सुजानगढ़ ५८. श्री ब्रह्मप्रकाश ओमप्रकाश लाहोटी, सुजानगढ़ ५९. आर्यसमाज सरदारशहर, चुरु ६०. श्री मनीष बाहेती ६१. श्रीमती सीमा खन्ना, अजमेर ६२. रामचन्द्र सिंह आर्य, लाडनूँ, नागौर।

ऋषि उद्यान में आर्य वीर एवं आर्य वीरांगना दल शिविर सम्पन्न

१२ मई को सायं ६ बजे राजस्थान व भारत के विभिन्न स्थानों से आये हुए आर्य वीरों के प्रशिक्षण शिविर का ऋषि उद्यान में शुभारम्भ हुआ। इसमें प्राथमिक विद्यालय से लेकर महाविद्यालय में पढ़ने वाले छात्रों ने भाग लिया। जैसा कि विदित है कि महर्षि दयानन्द की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा, सभ्य एवं सांस्कृतिक समाज के निर्माण के लिए नवयुवकों-नवयुवतियों के चरित्र-निर्माण हेतु कृतसंकल्प है। इसके लिए ऋषि उद्यान में मार्गदर्शक सदैव समुपस्थित हैं तथा अपने प्रचार-कार्यक्रम को गति दे रहे हैं। इस योजना के अन्तर्गत सभा के प्रचारक जहाँ देश के विभिन्न प्रान्तों में जाकर चरित्र-निर्माण शिविर का आयोजन करते-करवाते हैं, वहीं प्रत्येक वर्ष ग्रीष्मावकाश में ऋषि उद्यान परिसर में युवक-युवतियों के लिए पृथक्-पृथक् आवासीय चरित्र-निर्माण शिविर का आयोजन किया जाता है।

इसी क्रम में ऋषि उद्यान में विगत १२ से १९ मई २०१९ को छात्रों के लिए एवं २२ से २९ छात्राओं के लिये चरित्र-निर्माण शिविर का आयोजन किया गया। शिविर में राजस्थान व अन्य ७ प्रान्तों से आर्यवीर-वीरांगनाओं ने उत्साहपूर्वक भाग लिया। इस दौरान जहाँ आत्मरक्षा हेतु जूडो-कराटे, आसन-प्राणायाम, सूर्य नमस्कार, लाठी, भाला, तलवार, निशानेबाजी आदि का प्रशिक्षण दिया गया, वहीं बौद्धिक व आत्मिक विकास हेतु ध्यान, यज्ञ, वैदिक सिद्धान्तों का व्यवहारिक ज्ञान भी योग्य उपदेशकों-शिक्षकों के माध्यम से प्रदान किया गया। शिविर में बौद्धिक मार्गदर्शन हेतु परोपकारिणी सभा के मन्त्री श्री कन्हैयालाल आर्य ने कहा कि यज्ञोपवीत धारण करने वाले को सदैव सत्य बोलना चाहिए। झूठ का सहारा नहीं लेना चाहिए। एक झूठ को छिपाने के लिए अनगिनत झूठ बोलने पड़ते हैं। जो सत्य का सहारा लेता है, वह अभय हो जाता है। अभय व्यक्ति ही यश को प्राप्त करता है और अपने जीवन को सफल बना पाता है। वीरांगनाओं को डॉ. निशान्त जैन (आई.ए.एस.) सुनीता सिंह (टी.आई.), डॉ. प्रियंका (ए.एस.पी.), डॉ. वेदप्रकाश विद्यार्थी, श्रीमती सुयशा आर्य, श्री भास्कर जी, श्रीमती ज्योत्स्ना धर्मवीर- सदस्य परोपकारिणी सभा, श्री मुमुक्षु मुनि, श्री अरविन्द सेंगवा (अतिरिक्त जिला कलेक्टर), श्रीमती प्रीति चौधरी (अति. पुलिस अधीक्षक शहर), श्रीमती स्नेहलता पँवार (आई.ए.एस.) निदेशक आयुर्वेद विभाग, श्रीमती सरिता सिंह (अतिरिक्त पुलिस अधीक्षक, शहर), श्री सुभाष नवाल (कोषाध्यक्ष, परोपकारिणी सभा), श्री नवीन मिश्र, डॉ. आराधना जी एवं श्रीमती समीक्षा वर्मा ने मार्गदर्शन किया।

वहीं शारीरिक प्रशिक्षण-अनुशासन आदि के लिए श्री यतीन्द्र शास्त्री के निर्देशन में वीरांगनाओं के शिविर हेतु प्रधान शिक्षिका सुश्री श्वेता आर्या, अदिति आर्या, स्वस्ति आर्या, आरुषि आर्या, हितैषी सैनी, लक्षिता सैनी, कोमल साहू, विमल साहू, सुरभि शर्मा, प्रियंका आर्या, स्नेहा जी एवं आर्यवीरों के शिविर में प्रधान शिक्षक सुशील शर्मा, अभिषेक कुमावत, मुख्य योग शिक्षक सुनील जोशी, कमलेश पुरोहित, नीरज चौधरी तथा शिक्षक प्रणव प्रजापति, मानसिंह, दीपक शर्मा, रक्षित शर्मा, सुनील कश्यप, सुरेन्द्र सिंह, शनि आर्य, नवीन जोशी, प्रकाश साहू, कार्तिक प्रजापति, अंशु कुमावत का मार्गदर्शन प्राप्त हो सका।

शिविर के अन्तिम दिन नशा मुक्ति रैली का भी आयोजन किया गया। इस शिविर में छात्र-छात्राओं को बौद्धिक-शारीरिक प्रशिक्षण के साथ-साथ संगीत, चित्रकला, भाषण, हस्तलेखन, बौद्धिक आदि का भी प्रशिक्षण प्रदान किया गया तथा उस-उस विषय की परीक्षा भी ली गई। सर्वश्रेष्ठ, प्रदर्शन करने वाले छात्र-छात्राओं को समापन समारोह में गणमान्य नागरिकों की समुपस्थिति में पुरस्कृत किया गया। समापन समारोह में व्यायाम, लाठी, भाला, रस्सा, मल्लखम्भ, तलवार आदि का भव्य प्रदर्शन किया गया।

आर्यजगत् के समाचार

१. योग व बृहद् यज्ञ शिविर का आयोजन- आत्मशुद्धि आश्रम, बहादुरगढ़ द्वारा स्वामी धर्ममुनि जी के सान्निध्य में दि. २७ से ३० जून तक निःशुल्क योग एवं आसन-व्यायाम-प्राणायाम-स्वास्थ्य सुधार शिविर तथा ऋग्वेद मण्डल दो, बृहद् यज्ञ का आयोजन किया जा रहा है। जिसमें प्रमुख वक्ता एवं शंका समाधानकर्त्ता स्वामी विवेकानन्द परिव्राजक होंगे। सम्पर्क- राजवीर आर्य, सम्पर्क सूत्र ९८११७७८६५५

२. शुद्धि-संस्कार सम्पन्न- आर्यसमाज शृंगारनगर, लखनऊ द्वारा २० मई २०१९ को मुस्लिम युवती सुश्री चाँदनी, पुत्री निसार अली, जनपद उन्नाव का शुद्धि-संस्कार किया गया। युवती ने अपना नाम चाँदनी बनाये रखा है।

३. यज्ञ सम्पन्न- अथर्ववेद पारायण महायज्ञ दि. १ से ५ मई २०१९ तक परबतसर, जि. नागौर, राजस्थान में सम्पन्न हुआ। वेद प्रवचन के साथ प्रातः योगासन का अभ्यास भी लगातार पाँच दिवस तक कराया गया। इस महायज्ञ में कुल १८० जोड़ों ने बड़े ही उत्साह के साथ यज्ञ सम्पन्न किया। श्री किसनाराम आर्य-नागौर का सक्रिय सहयोग रहा।

वैवाहिक समाचार

४. वधु चाहिए- आर्य परिवार, संस्कारित, जन्मतिथि- १२.०१.१९९२, कद-५ फुट ५ इंच, शिक्षा- बी.टेक, अन्तर्राष्ट्रीय कम्पनी में कार्यरत प्रतिष्ठित परिवार के युवक हेतु आर्य परिवार की सुशिक्षित एवं संस्कारी युवती चाहिए। **सम्पर्क- ९४१२८६५७७५, ९४१२१३५०६०**

चुनाव समाचार

५. आर्यसमाज शहर, बड़ा बाजार सोनीपत के चुनाव में **प्रधान**- श्री वेदप्रकाश आर्य, **मन्त्री**- श्री प्रवीण आर्य, **कोषाध्यक्ष**- श्री सुभाष रहेजा को चुना गया।

६. आर्य केन्द्रीय सभा सोनीपत के चुनाव में २०१९ से २०२१ के लिये **प्रधान**- श्री मुकेश रावत, **मन्त्री**- श्री सुदर्शन आर्य, **कोषाध्यक्ष**- श्री अशोक आर्य को चुना गया।

७. आर्य वानप्रस्थ आश्रम ज्वालापुर, हरिद्वार के वार्षिक निर्वाचन में **डॉ. शिवकुमार शास्त्री** को २०१९-२०२० के लिए **प्रधान** निर्वाचित किया गया है। डॉ. शिवकुमार शास्त्री सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा एवं आर्य केन्द्रीय सभा दिल्ली आदि पदों पर भी रह चुके हैं।

८. आर्यसमाज स्वामी दयानन्द मार्ग, अम्बाला छावनी के चुनाव में **प्रधाना**- श्रीमती विजय गुप्ता, **मन्त्री**- श्री राजकुमार गर्ग, **कोषाध्यक्ष**- श्री सुनील गुप्ता को चुना गया।

वैदिक पुस्तकालय अजमेर द्वारा प्रकाशित पुस्तकों पर विशेष छूट

१. कुल्लियाते आर्य मुसाफिर (पं. लेखराम ग्रन्थ संग्रह)- दो भाग

लेखक- पण्डित लेखराम

सम्पादक- प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु, अबोहर, पंजाब

मूल्य- रुपये ~~९००~~/- छूट पर- ६००/-

२. महर्षि दयानन्द का पत्र-व्यवहार (दो भाग में)

मूल्य - रुपये ~~८००~~/- **छूट पर - ५००/-**

३. अष्टाध्यायी भाष्य- ३ भाग (१ सैट)

भाष्यकार- महर्षि दयानन्द सरस्वती

मूल्य- रुपये ~~५००~~/- **छूट पर**- ३५०

पुस्तकें हेतु सम्पर्क करें:-

वैदिक पुस्तकालय, अजमेर से क्रय की जाने वाली पुस्तकों की राशि ऑनलाइन जमा कराने हेतु

खाता धारक का नाम - **वैदिक पुस्तकालय, अजमेर। दूरभाष - 0145-2460120**

बैंक का नाम - **पंजाब नेशनल बैंक, कचहरी रोड, अजमेर।**

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या - **0008000100067176**

IFSC - PUNB0000800

परोपकारिणी सभा द्वारा आयोजित 'आर्यवीरांगना दल'
शिविर सम्पन्न (२२ से २९ जून २०१९)

आर जे/ए जे/80/2018-2020 तक   प्रेषण : १५-१६ जून २०१९   आर.एन.आई. ३९५९/५९

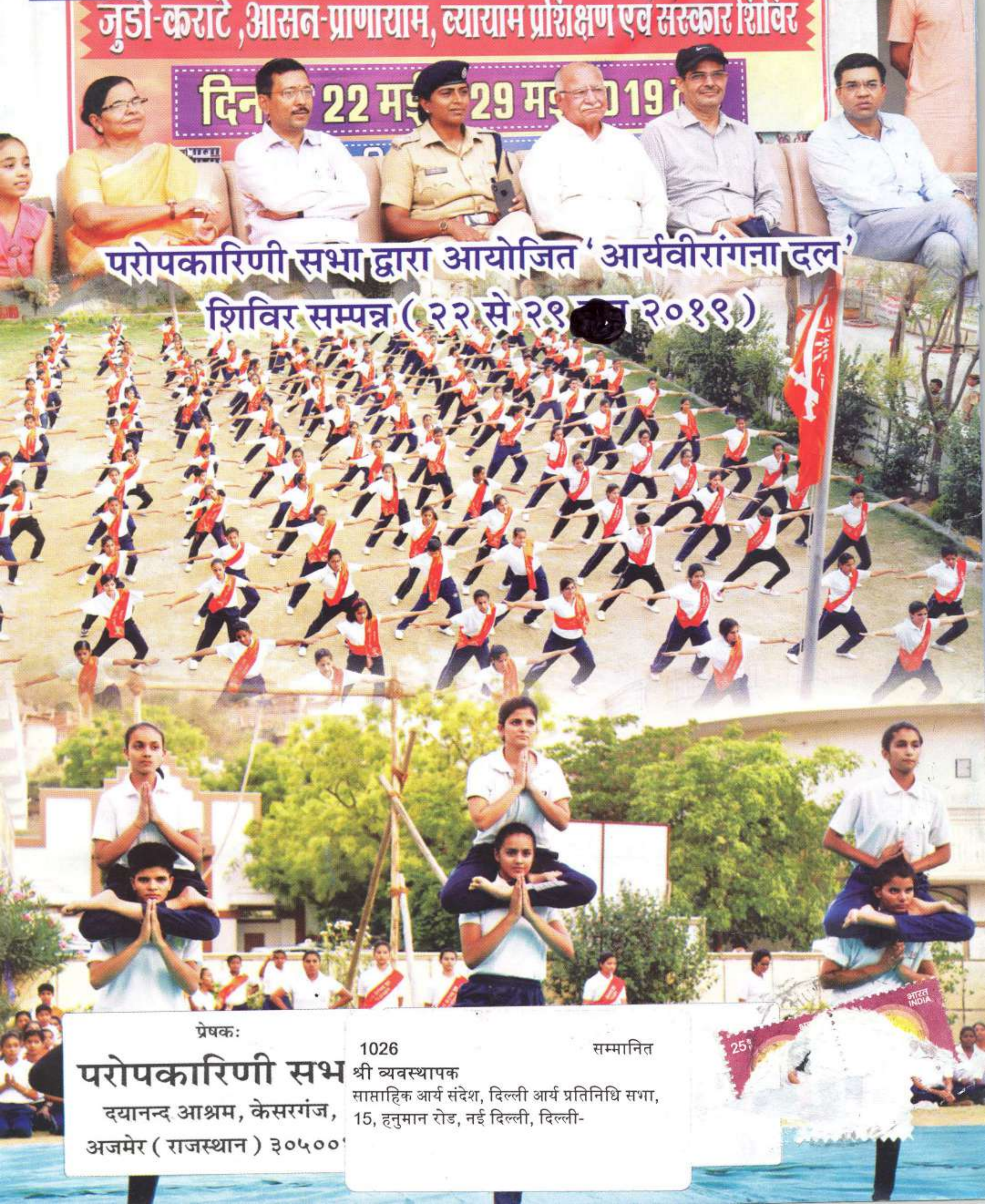

परोपकारिणी सभा द्वारा आयोजित 'आर्यवीरांगना दल'
शिविर सम्पन्न (२२ से २९ [redacted] २०१९)

प्रेषकः
परोपकारिणी सभ
दयानन्द आश्रम, केसरगंज,
अजमेर (राजस्थान) ३०५००

1026   सम्मानित
श्री व्यवस्थापक
साप्ताहिक आर्य संदेश, दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा,
15, हनुमान रोड, नई दिल्ली, दिल्ली-